Svāmihaṃsasvarūpakṛtam Ṣaṭcakranirūpaṇacitram : bhāṣyasamalaṃkṛtaṃ bhāṣāṭīkopetañ ca = Shatchakra niroopana chittra with bhashya and bhasha containing the pictures of the different nerves and plexuses of the human body with their full description showing the easiest method how to practise pranayam by the mental suspension of breath through meditation only ; by Shri Swami Hansa Swaroop.

Contributors

Haṃsasvarūpa, Svāmi.
Pūrṇānanda, active 1526-1577.

Publication/Creation

Muzaffarpur : Trikutivilas Press, [190?]

Persistent URL

https://wellcomecollection.org/works/zpv6e27p

License and attribution

This work has been identified as being free of known restrictions under copyright law, including all related and neighbouring rights and is being made available under the Creative Commons, Public Domain Mark.

You can copy, modify, distribute and perform the work, even for commercial purposes, without asking permission.

Wellcome Collection
183 Euston Road
London NW1 2BE UK
T +44 (0)20 7611 8722
E library@wellcomecollection.org
https://wellcomecollection.org

P.B.
SANSK.
391

P. B. SANSKRIT
P. B. SANSKRIT 391
22500849482

॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मणेनमः ॥

श्री स्वामिहंसस्वरूपकृतम् ।

षट्चक्रनिरूपणचित्रम् ।

भाष्यसमलंकृतं भाषाटीकोपेतञ्च

यत्र मानसप्राणायाम द्वारा प्राणायामं कुर्वतां जनानामविलम्बेन क्रियानिष्पत्त्यर्थं शरीरस्थानां
नाड़ीणां चक्राणाञ्च ध्यानसौकर्य्याय व्याख्यासमलंकृतानि
चित्राणि वर्णितानिसन्तीतिदिक् ।

जिसमें मानसप्राणायाम द्वारा प्राणायाम करनेवालोंकी क्रिया शीघ्र सिद्ध होनेके निमित्त
ध्यानकी सुलभताके लिये शरीरस्थ नाड़ियों औ चक्रोंके चित्र उनकी व्याख्या
सहित चित्रितकर देखलायेगयेहैं ।

SHATCHAKRA NIROOPAN CHITTRA

WITH

BHASHYA AND BHASHA

CONTAINING

The pictures of the different Nerves and Plexuses of the human body
with their full description showing the easiest method how
to practise Pranayam by the mental suspension of
breath through meditation only.

By

SHRI SWAMI HANSA SWAROOP

प्रथमवार १००० } { 1st. Edition 1000

Trikutivilas Press Muzaffarpur *(Bihar.)*

WELLCOME LIBRARY INSTITUTE

P.B. Samk. 391

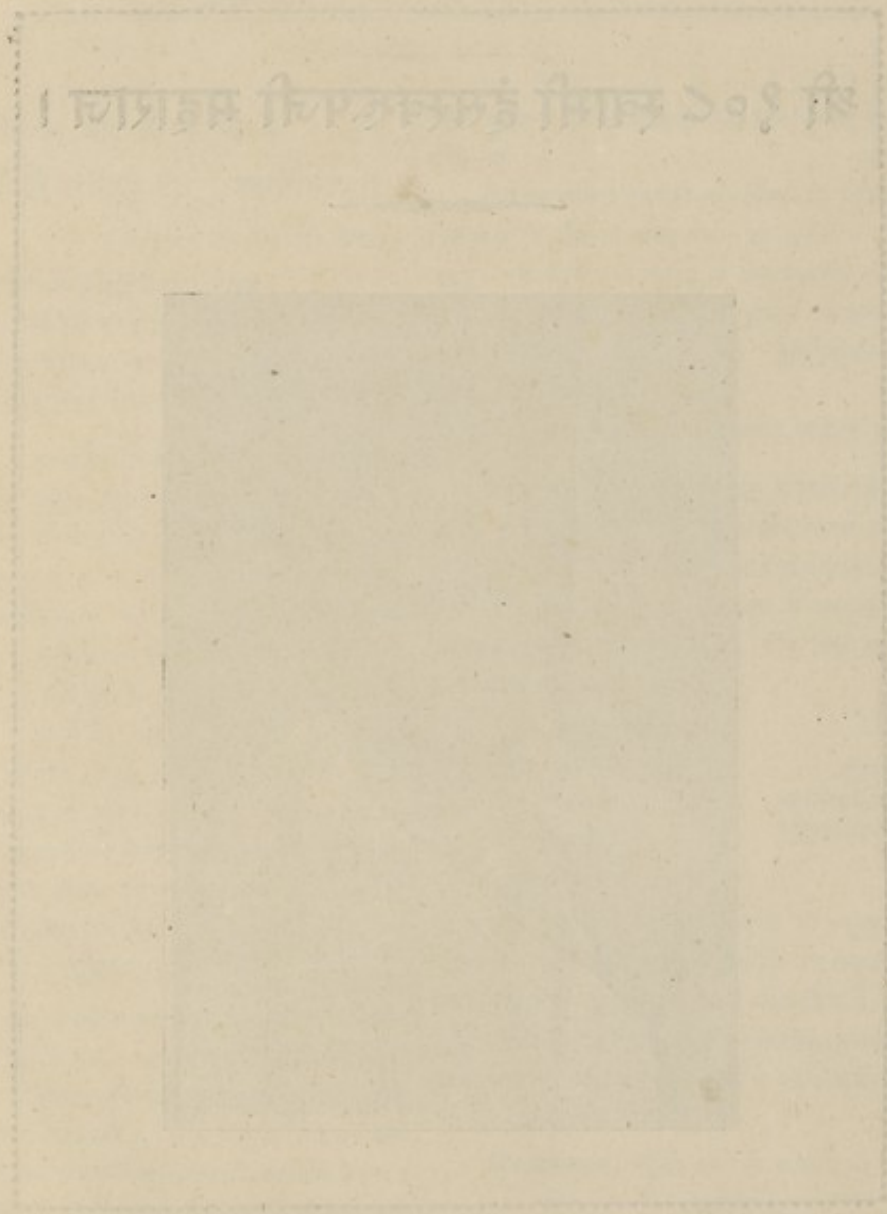

सूर्य्य, चन्द्र, आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, इत्यादि को गुरुद्वारा शिक्षा

यम घेरै तब कहां जाहु पराई ॥ कायागढ़० ॥

श्री १०८ स्वामी हंसस्वरूपजी महाराज।

॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः ॥

श्री १०८ स्वामीहंसस्वरूपविरचितं

षट्चक्रनिरूपणचित्रम् ।

अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोर घोरतरेभ्यः ।
सर्वेभ्यः शर्व सर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः ॥

(तै० आ० प्र० १० अ० १९) ।

यस्मिन्दर्पणबिम्बजृम्भितपुरीसंदर्भतुल्यं जगत् ।
भातं यत्परसंविदो यत इदं रूप्यादिवल्लीयते ॥
यस्याज्ञानविजृम्भिता परभिदा वारीन्दु भेदादिवत् ।
तं भूमानमुपास्महे हृदि सदा वामार्धजानिं शिवम् ॥

प्रिय पाठकगण! उस परब्रह्मजगदीश्वर ने जितनी अद्भुत रचना अपने इस स्थूलबृहद्ब्रह्माण्ड अर्थात् विराटमूर्ति में की है वे सब ठीक २ जैसी की तैसी इस साढ़ेतीन हाथके शरीर में भी रचदी है; अर्थात् भूः भुवः स्वः इत्यादि सप्तलोक ऊपर, अतल, वितल, सुतल इत्यादि सप्तलोक नीचे, फिर सूर्य्य, चन्द्र, नक्षत्र, सागर, पर्वत, वृक्ष, नदी, नद इत्यादि जो कुछ इस बृहद्विश्व में प्रगट रूप से देख पड़ते हैं वे सब के सब इस क्षुद्र ब्रह्माण्ड अर्थात् आप के शरीर में ज्यों के त्यों स्थित हैं, तात्पर्य्य यह कि शरीर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का प्रतिबिम्ब है, जैसे एक चित्रकार (Photographer) अपने फ़ोटो के कांच (Lens) होकर मुम्बई सदृश किसी बड़े शहर को चारअंगुल के पत्र पर ज्यों का त्यों प्रतिबिम्बित कर चित्रित करडालता है उसी प्रकार सृष्टिकर्तारूप अत्यन्त चतुर चित्रकार (Photographer) ने मायाके कांच होकर पंचभूत के अत्यन्त छोटे पत्र पर अनन्तकोटि योजन विस्तार ब्रह्माण्ड को चित्रित कर देखाया है ।

॥ प्रमाण ॥

देहेऽस्मिन् वर्तते मेरुः सप्तद्वीप समन्वितः । सरितः सागराः शैलाः क्षेत्राणि क्षेत्रपालकाः ॥ १ ॥ ऋषयो मुनयः सर्वे नक्षत्राणि ग्रहास्तथा । पुण्यतीर्थानि पीठानि वर्तन्ते पीठ देवताः ॥ २ ॥ सृष्टि संहारकर्तारौ भ्रमन्तौ शशि भास्करौ । नभो वायुश्च वह्निश्च जलं पृथ्वी तथैवच ॥३॥ त्रैलोक्ये यानि भूतानि तानि सर्वाणि देहतः । मेरुं संवेष्ट्य सर्वत्र व्यवहारः प्रवर्तते ॥४॥ जानाति यः सर्व मिदं स योगी नात्र संशयः । ब्रह्माण्ड संज्ञके देहे यथा देशं व्यवस्थितः ।५।

(शिवसंहिता द्वितीयः पटलः) ।

अर्थात् जो प्राणी एवम् प्रकार मेरुदण्ड (Spinal chord) से लिपटेहुए सातोंद्वीप, सरित, सागर, शैल, क्षेत्र, क्षेत्रपाल, ऋषि, मुनि, नक्षत्र, ग्रह, पुण्यतीर्थ, सिद्धपीठ, पीठों के देवता, सृष्टि संहार करनेवाले सूर्य्य, चन्द्र, आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, इत्यादि को गुरुद्वारा शिक्षा पाकर पूर्णप्रकार से इस देहरूपी ब्रह्माण्डमें जानता है वही योगी है इसमें संदेह नहीं ।

प्रिय पाठकगण! इतनाही नहीं किन्तु उस चित्रकार ने इस पंचभौतिक शरीर में और भी अनेक प्रकार की अलौकिक रचनाओं को अपनी अद्भुत सत्ता द्वारा ऐसी चतुराई के साथ गोपनीय रखी है जिनके जानने के लिये पूर्व के ऋषि महर्षियों ने चिरकाल पर्य्यन्त तपक्रिया औ जब जाना परमानन्द में मग्न होगये, जैसे "तैत्तिरीयोपनिषद् के तृतीयाध्याय भृगुवल्ली" में लिखा है कि—

भृगुर्वै वारुणिः वरुणं पितरमुपससार अधीहि भगवो ब्रह्मेति ।

अर्थात् एक बार वरुण के पुत्र भृगु ने अपने पिता के समीप जाकर प्रार्थना की कि हे पितः मुझ को ब्रह्म का बोध कराओ तब "**तꣳहोवाच। तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व तपो ब्रह्मेति स तपोऽतप्यत स तपस्तप्त्वा**" पिताने उत्तर दिया तप के द्वारा उस ब्रह्म को जान क्योंकि तपही ब्रह्म है तब भृगु ने तपस्या की और तप कर नीचे लिखी गुप्त वस्तुओं को इस शरीर में जाना । .

१. अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्		श्रुतियों को संक्षिप्त कर देखलाया गया है जिज्ञासुओं को चाहिये कि "तैत्तिरीयोपनिषद्" देखें ।
२. प्राणो ब्रह्मेति	,,	
३. मनो ब्रह्मेति	,,	
४. विज्ञानं ब्रह्मेति	,,	
५. आनन्दो ब्रह्मेति	,,	

उक्त श्रुतियों से स्पष्ट देखपड़ता है कि यह शरीर नाना प्रकार के आश्चर्य्यमय पदार्थों का भण्डार है जिस में उस परमात्मा ने **अन्न, प्राण, मन, विज्ञान** औ आनन्द रूप होकर प्रवेश किया है, अर्थात् इस शरीर में ये पांच कोष हैं जिनमें एक २ को भली भांति जानकर जिज्ञासु ब्रह्मानन्द लाभ करता है, अतएव इन पांचों में से प्रथम **अन्नमयकोष** का भेद इस स्थान में जनायाजाता है ।

प्रिय पाठकगण! बहुतेरे सन्तों ने भाषा में भी कहा हैः—

॥ पद ॥

कायागढ़ अजब बनाई सन्तो निरखहु मन ठहराई ॥ सत्तर हाट बहत्तर कोठा चौंसठ यन्त्र लगाई । सो थवई खोजो मेरे भाई जिन यह महल बनाई ॥ कायागढ़० ॥ पांच पवनियां में एक नागर एक राह चलाई । भाव बिना कछु कहत बनत नहिं राखहु मनहिं छिपाई ॥ कायागढ़० ॥ कहत कबीर सुनो भाई साधो छाड़हु सब चतुराई । दश दरवजवा जब यम घेरे तब कहां जाहु पराई ॥ कायागढ़० ॥

॥ पद ॥

कोई लोदत सन्त सुजान कायाबन फूलिरही ॥ १. एका एक मिले गुरु पूरा मूलमंत्र जो पावे। सकल साधु की बानी बूझे मन प्रतीत बढ़ावे ॥ कोई लो० ॥ २. दू का दुई तजो नर दुविधा रज सत तमगुण त्यागो। सतगुरु मारग ऊर्ध निरेखो क्या सोवे उठिजागो ॥ कोई लो० ॥ ३. तीया तीन त्रिवेणी संगम जहां अगम स्थाना। ईषा तृष्णा मारिके कोई संज्ञन कर स्नाना ॥ कोई लो० ॥ ४. चौथे चार चतुर नर सोधे चौथे पद को लागे। चढ़िके प्रेमहिंडोला झूले चितवत मन अनुरागे ॥ कोई लो०॥ ५. पांचे पांच पचीसो वश कर सांच हिया ठहरावे। ईड़ा, पिंगला, सुषुमन सोधे ध्रुवमण्डल उठि धावे ॥ कोई लो०॥ ६. छठवें छवो चक्र धरि बेधे शून्यभवन मन लावे। विकशित कमल हिया को परिचे तब चन्द्रा दरसावे ॥ कोई लो० ॥ ७. सातें सात सहज धुनि उपजे सुनि २ आनन्द बाढ़े। ऐसो दीन दयाल सांच गुरु बूड़त भवजल काढ़े ॥ कोई लो०॥ ८. आठे आठ गगनगुंफा में दृष्टि लगावे सोई। आतम से परमातम चीन्हे ताहि तुले नहिं कोई ॥ कोई लो० ॥ ९. नउये नवो द्वार होइ निरखो जगे जगामग ज्योती। दामिन दमकै अमृत बरसे झरे झराझर मोती ॥ कोई लो० ॥ १०. दशे दहाई देह पाइ नर जो पढ़ एक पहाड़ा। धरनीदास तासुपद वन्दे निशिदिन बारम्बारा ॥ कोई लो० ॥

एवम् प्रकार सन्तों की अनेक बानी इस कायागढ़ के विषय हैं विस्तार के भय से नहीं लिखा।

अब जानना चाहिये कि इस गढ़ (Fort) के पांच शहरपनाह अर्थात् तट सात तहखाने अर्थात् तलघर, साढ़े तीन लक्ष कोठलियां औ सात मन्ज़िले अर्थात् महल हैं, जिसके सातवें महल पर वह बादशाहों का बादशाह अर्थात् महाराजाधिराज परब्रह्म ज्योतिस्स्वरूप निवास कर रहा है, जिस प्रकार किसी गढ़ के उस मकान पर जिसमें स्वयं महाराज बैठता है एक झंडी लगा दी जाती है उसी प्रकार इस शरीर रूपी गढ़ में भी जहां वह ब्रह्म गुप्तरूप से निवास करता है शिखा रूपी झंडी लगा दी गई है अर्थात् शिखा ब्रह्मरन्ध्र के स्थान को जनाती है इसी कारण सनातनधर्म के आचार्यों ने शिखा रखवाकर गायत्री मंत्र से सन्ध्या के समय शिखा बन्धन की प्रणाली निकालदीहै* ।

अब उक्त पांचों तट सातों तलघर इत्यादि की व्याख्या की जाती है और उनका मुख्य तात्पर्य्य देखलाया जाता है।

पांच शहरपनाह (तट)=१. आकाश, २, वायु, ३. अग्नि, ४. जल, ५. पृथ्वी, प्रमाण श्रुति—ॐ आकाशाद्वायुः वायोरग्निः अग्नेरापः अद्भ्यः पृथ्वी ।

सात तहखाने (तलघर)=१. रोम, २. चर्म, ३. रुधिर, ४. मांस, ५. हड्डी, ६. मज्जा, ७. धातु, प्रमाण श्रीमद्भागवत—सप्तत्वगष्टविटपोनवाक्षः ।

साढेतीनलक्ष कोठलियां=साढ़े तीन लक्ष नाड़ियां जो इस शरीर में हैं ।

* शिखाबन्धन से केवल केश बांध लेना नहीं तात्पर्य्य है किन्तु अपने चित्त-वृत्ति को सन्ध्या के समय ब्रह्मरन्ध्र के समीप ब्रह्म के ध्यान में बांध रखना शिखाबन्धन है इसी कारण बहुतेरे आचार्य्यों ने केवल स्पर्श करलेने की आज्ञा दी है।

प्रमाण शिवसंहिता—सार्धत्रयलक्ष नाड्यः सन्ति देहान्तरे नृणां। प्रधानभूता नाड्यस्तु तासु मुख्या चतुर्दश ॥१॥ सुषुम्नेडा पिंगला च गांधारी हस्तिजिह्विका। कुहू सरस्वती पूषा शंखिनी च पयस्विनी ॥२॥ वारुणालम्बुषा चैव विश्वोदरी यशस्विनी। तासु तिस्रो मुख्याः स्युः पिंगलेडा सुषुम्निका ॥३॥ तिसृष्वेका सुषुम्णैव मुख्या सा योगिवल्लभा। अन्यास्तदाश्रयं कृत्वा नाड्यः सन्तिहि देहिनां ॥४॥ नाड्यस्तु ता अधोवदनाः पद्मतन्तुनिभाः स्थिताः। पृष्ठ वंशं समाश्रित्य सोम सूर्य्याग्निरूपिणी ॥५॥ तासां मध्ये गता नाड़ी चित्रा सामम वल्लभा। ब्रह्मरन्ध्रं च तत्रैव सूक्ष्मात् सूक्ष्मतरं शुभम् ॥६॥

भाषा टीका—अर्थात् शिवजी कहते हैं कि इस शरीरमें साढ़ेतीन लक्ष प्रधान नाड़ियां हैं जिनमें १४ मुख्य हैं ॥१॥ सुषुम्णा, ईड़ा, पिंगला, गांधारी, हस्तिजिह्वा, कुहू, सरस्वती, पूषा, शंखिनी, पयस्विनी ॥२॥ वारुणा, अलम्बुषा, विश्वोदरी, यशस्विनी, इन चौदहोंमें प्रथमकी तीन नाड़ियां पिंगला, ईड़ा, सुषुम्णा, मुख्य हैं ॥३॥ तिनमें भी सुषुम्णा मुख्य है जो योगियोंकी अत्यन्त प्यारी है जिसके आश्रय और सब नाड़ियां देहमें स्थित हैं ॥४॥ सो सुषुम्णा अधोमुखी कमलनालके सूत सी पतली 'पृष्ठवंश' अर्थात् 'मेरुदण्ड' (Spinal chord) के मध्य स्थित चन्द्र, सूर्य्य, अग्नि करके अधिष्ठिता है ॥५॥ शिवजी कहते हैं कि इसी सुषुम्णाके मध्य मेरी प्यारी नाड़ी चित्रिणी है जो अत्यन्त सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म ब्रह्मरन्ध्रको चलीगई है ॥६॥

सातमहल (मन्जिले)=सातों पद्म १. पहिले महलके चार द्वार हैं अर्थात् चतुर्दलपद्म (आधारचक्र), २. दूसरे महलके ६ द्वार हैं अर्थात् षट्दलपद्म (मणीपूरक चक्र), ३. तीसरे महलके दश द्वार हैं अर्थात् दशदलपद्म (स्वाधिष्ठान चक्र), ४. चौथे महलके द्वादश द्वार हैं. अर्थात् द्वादशदलपद्म (अनाहत चक्र), ५. पांचवें महलके षोड़श द्वार हैं अर्थात् षोड़शदलपद्म [विशुद्धाख्य चक्र], ६. छठवें महलमें दो छोटी २ खिरकियां लगी हैं अर्थात् द्विदलपद्म [आज्ञा चक्र] इनहीं खिरकियों की सन्धि स्थान पर अर्थात् त्रिकुटीमहल पर एक इतराख्यलिङ्ग नाम करके टेलिस्कोप (Telescope) लगा हुआ है जिस होकर दृष्टि उलटा कर देखने से एक हज़ारद्वारी अर्थात् सहस्रदलपद्म देख पड़ता है जिसकी कर्णिकामें यह ब्रह्मरूपी हीरा कोटि सूर्य्यके समान चमाचम चमक रहा है ७. सातवें महलके हज़ार दरवाज़े अर्थात् द्वार हैं जिसको सहस्रदलपद्म (शून्यचक्र) कहते हैं ।

प्रिय पाठकगण! प्राणायाम करनेवालोंको तो उक्त नाड़ियों औ चक्रों का भेद गुरुद्वारा अवश्यही जानलेना चाहिये क्योंकि इनके बिना जाने प्राणायाम सिद्ध नहीं होसकता। जिस प्राणायामको इस समय लोग अज्ञानता के कारण अत्यन्त कठोर और भयंकर समझते हैं वह इनके भेद जानलेने से ऐसा सुलभ होजाता है जैसे सुख पूर्वक निद्रालेनी इस कारण इनका पूर्ण भेद जनानेके लिये इस ग्रन्थमें चक्रोंका ध्यान चित्र द्वारा स्पष्ट किया जाता है ।

ज्ञात होवे कि प्राणायाम दो प्रकारका है, "अगर्भ औ सगर्भ" "जिस का वर्णन श्री ५ स्वामी हंसस्वरूप कृत बृहत्सन्ध्याके प्राणायाम विधिमें किया हुआ है देखलेना" इन दोनों प्राणायाममें पूरक, कुम्भक, रेचक

अवश्यही किये जाते हैं अर्थात् श्वासको चढ़ाना, रोकना, उतारना अति आवश्यक है किन्तु इनदिनों बाल्यावस्था [बचपन] हीमें ब्रह्मचर्य्यके नष्ट होजाने से वीर्य्यकी निर्बलता और नाड़ियों में कफ़ वायु इत्यादिकी मलीनताके कारण प्राणियोंको श्वास चढ़ाने उतारने में बल नहीं मिलता जिस कारण प्राणवायु अपने शुद्ध मार्गको नहीं पाता फिर बेचारे साधक थोड़े दिनोंके अभ्यासके पश्चात् थक थकाकर क्रिया छोड़ देते हैं, ओ प्राणायाम से हाथ धोकर प्रारब्ध २ पुकारने लगते हैं, इस कारण इन बेचारे थके हुये साधकोंको फिर साहस दिलाकर प्राणायाममें प्रवृत्त करानेके लिये प्राणायाम का अत्यन्त सुलभ भेद जिसको मानसप्राणायाम कहते हैं बतलाया जाता है, इस क्रियामें बिना श्वासके चढ़ाये उतारे केवल मनही द्वारा चक्रों का ध्यान करते हुए चढ़ना उतरना पड़ता है जो साधक द्वादश वर्ष पर्य्यन्त यम* नियमके साथ केवल मानसप्राणायामका नित्य अभ्यास करे उसकी क्रिया सिद्ध होजावे।

मानसप्राणायामके समय चतुर्दलपद्मसे सहस्रदलपद्म पर्य्यन्त किस मन्त्रसे किस दलमें क्या ध्यान करना चाहिये इस **षट्चक्रनिरूपण चित्र** में वर्णन किया जाता है।

शंका—इस समय प्रायः बहुतेरे नवशिक्षित युवक (New enlightened young) यह कह पड़ते हैं कि इस देहमें चक्र इत्यादि कहां हैं यदि हैं तो डाक्टरोंको क्यों नहीं देखपड़ते; हंसी आती है इनकी बुद्धि पर जो बिन समझे "मान न मान मैं तेरा मेहमान" बनजाते हैं, इसमें सन्देह नहीं कि वे बड़े विद्वान औ बुद्धिमान हैं किन्तु बुद्धि कैसी भी विशाल क्यों न हो जिस विषयकी ओर लगाई जाती है उसीके समझनेमें प्रवीण होती है इतर विषय में नहीं, जैसे किसी अत्यन्त चतुर बैरिस्टर (Barrister at Law) की बुद्धि किसी रोगीको निरोग कर देनेमें कुछ भी काम नहीं कर सकती और एक विशाल बुद्धिवाला डाक्टर वा सर्जन अर्थात् चिकित्सा शास्त्रमें प्रवीण जजसाहबके इजलास पर किसी अभियोग [मुकदमा] में कुछ भी बोलने की शक्ति नहीं रखता, इसी भांति इनदिनों नवशिक्षितोंकी बुद्धि जो गणित (Arithmetic), बीजगणित (Algebra), रेखागणित (Geometry), भूगोल (Geography) इत्यादिमें तो अतिही प्रवीण है धार्मिक विषय (Religious subject) में बिना कुछकाल परिश्रम किये कुछ समझनेको समर्थ नहीं होसकती, इस कारण इनकी शंकाके निवारणार्थ इन सातों पद्मोंका अंगरेज़ी नाम जिनको डाक्टर लोग अपनी चिकित्सा शास्त्र [Anatomy] द्वारा भली भांति जानते हैं इस स्थानमें देखलाकर, उनके दल, दलोंके अक्षर, उनके तत्त्व, तत्त्वोंके बीज, बीजोंके वाहन, दलोंके रंग, उनके यन्त्र, उनके देव, देवोंकी शक्तियां, उनके ध्यानके फल इत्यादि क्या हैं और इनके तात्पर्य्य क्या हैं इस स्थानमें वर्णन किये जाते हैं।

डाक्टरी पुस्तकोंसे अर्थात् अनैटोमी [Anatomy] से पद्मोंके नाम ये हैं—१. चतुर्दलपद्म=Pelvic Plexus. २. षट्दलपद्म=Hypogastric Plexus. ३. दशदलपद्म=Epigastric Plexus. ४. द्वादशदलपद्म=Cardiac Plexus. ५. षोड़शदलपद्म=Carotid Plexus. ६. द्विदलपद्म=Medulla oblongata. ७. सहस्रदलपद्म=Brain. इस ग्रन्थ के चित्रोंके मस्तक पर भी ये नाम दियेहुएहैं और उनका स्थान भी दिखा हुआ है देखलेना।

पद्मोंके दल=दलोंसे तात्पर्य्य यह नहीं है कि शरीरमें कमल की पत्तियां फैली हुई हैं किन्तु दलोंका अर्थ गुच्छ है, जैसे वृक्षोंमें पांच सात फलोंके एकत्र होनेसे एक गुच्छ बनता है वैसेही इस शरीरके जिन २ स्थानोंमें जितनी ओरसे नाड़ियोंके गुच्छ फूट २ कर निकले हैं उतनेही उसके दल कहेगये, जैसे चतुर्दलपद्मके चार दलोंका तात्पर्य्य यह है कि इस स्थानमें नाड़ियां चार ओरसे गुच्छ बनाकर निकल गई हैं, इसी कारण अंगरेज़ीमें इनको Plexus कहते हैं, ऐसेही और दलोंको भी जानना।

दलोंके अक्षर=ऐसा नहीं कि अ, आ, इ, ई, क, ख, ग, घ इत्यादि इन दलों पर खोदकर लिखेहुएहैं किन्तु अभिप्राय यह है कि बोलनेके समय वायुके धक्के लगनेसे जिस गुच्छसे जौन अक्षर बाहर निकलता है वही उस दलका अक्षर है। इसी कारण 'अ' से 'ह' तक पचासों अक्षर षट्चक्रके पचासों दलों पर देखलाये गये हैं। सहस्रदलकी बीस २ पत्तियां एकही अक्षरकी देनेवाली हैं जैसे किसी यन्त्रालय (Press) के एक एक डिब्बे (Case) में एक प्रकारके अनेक अक्षर (Type) रहते हैं जहां एकही शब्दमें एकही अक्षर दो चार आये तो उनहीं डिब्बेसे लेकर जोड़े जाते हैं उसी प्रकार बोलनेके समय भी जहां एकही शब्दमें एकही अक्षर दो चार एकसंग आये तो गस्तिष्ककी पत्तियां उनको पूर्ण करदेती हैं जैसे कक्का, चच्चा, बच्चा, डब्बू, कक्कू इत्यादि।

पद्मोंके तत्त्व=चतुर्दलमें पृथ्वी तत्त्व, षट्दलमें जल, दशदलमें अग्नि, द्वादशदलमें वायु, षोड़शदलमें आकाश, ये पांचों तत्त्व जो पांचों दलोंमें कहेगयेहैं इनका अभिप्राय यह है कि जैसे रेलवे यन्त्र अर्थात् एनजिन (Engine) में कहीं आग जलरही है, कहीं पानी गरम होरहा, कहीं वाष्प (Steam) तयार होरहा, कहीं वायु दम देरहा, जिनके मेलसे रेलगाड़ी आगे बढ़नेको समर्थ होती है, उसी प्रकार अन्न जल के भोजनके पश्चात् इस शरीरमें ये पांचों तत्त्व इनहीं पांचों स्थानमें तयार होते हैं जिनसे शरीर पुष्ट होकर सर्व व्यवहार करनेको समर्थ होता है। द्विदलमें* महत्तत्व अर्थात् सब तत्त्वोंके प्रगट होनेका स्थान है और सहस्रदल तत्त्वातीत अर्थात् परब्रह्मका स्थान है।

तत्त्वोंके बीज=पृथ्वीका (लँ) जलका [वँ] अग्निका [रँ] वायुका (यँ) आकाशका (हँ) जो पद्मोंकी कर्णिकामें बीजके अक्षर हैं उनसे यह नहीं समझना चाहिये कि लिखेहुएहैं किन्तु इनका तात्पर्य्य यह है कि जैसे रेलगाड़ी अथवा धूआंकश (Steamer) के यन्त्रमें कहीं आग धकधक, वायु फकफक, जल सूंसूं, वाष्प कूंकूं शब्द भररहा है उसी प्रकार इन कमलोंमें भी जिस तत्त्वके तयार होनेमें वायुके धक्के लगनेसे जहां जैसा शब्द होकर तत्त्व तयार होरहा है वही उस तत्त्वका बीज अर्थात् उत्पन्नकरनेका कारण अथवा सत्ता (Power) कहाजाताहै, जैसे चतुर्दलमें लँ लँ लँ लँ लँ शब्द होनेसे पृथ्वी तत्त्व तयार होरहा है, तात्पर्य्य यह कि इस अन्नमयकोष स्थूल शरीरमें जो कुछ अन्न डालिये उसमेंसे पृथ्वीका अंश यहांही खींच जाता है और इसी स्थानमें पृथ्वी तत्त्व तयार

* यम नियमका विधिपूर्वक वर्णन "श्री स्वामी हंसस्वरूप कृत प्राणायामविधि" में किया हुआ है।

* द्विदल औ सहस्रदलका भेद गुरुद्वारा जानना चाहिये।

होकर सारांश सर्वाङ्गमें फैल जाता है औ उसका अधिकांश अर्थात् मल भाग इसी स्थानमें एकत्र हो गुदा मार्गसे बाहर आता है इस स्थानमें वायु लँ लँ लँ लँ लँ ऐसा शब्द दिन रात निरन्तर कररहा है जिससे ये सब कार्य्य पृथ्वीके होते हैं, ऐसेही षट्दलमें अर्थात् पेडू पर वायु वँ वँ वँ वँ वँ वँ शब्द करता हुआ जलके कार्य्यको कररहा है अर्थात् जो कुछ जल ग्रहण कीजिये उसका सारांश सर्वाङ्ग शरीरमें फैल जाता है और मल भाग पेशाब (मूत्र) होकर इसी स्थानसे लिङ्ग मार्ग द्वारा बाहर आता है प्रगट है कि मूत्र नहीं उतरनेसे पेडू फूलता है। ऐसेही वायु रँ रँ रँ रँ रँ रँ शब्द करता हुआ नाभी स्थानके दशदलमें अग्नि तत्त्वको प्रगट करता है जिससे अन्नादि सब भस्म होते हैं, फिर द्वादशदलमें वायु यँ यँ यँ यँ यँ यँ शब्द करता हुआ कलेजे पर वायु तत्त्वको प्रगट करता है, स्पष्ट है कि जब डकार आती है इसी दलके स्थानसे आती है, इसी प्रकार वायु हँ हँ हँ हँ हँ हँ शब्द करता हुआ आकाश मार्गको गलेके स्थानमें खोलता है जिस होकर प्राण संचार करता है प्रगट है कि सम्पूर्ण शरीरकी कलाई, कक्ष, इत्यादि खड्डों में कहीं भी किसी बड़े मोटे रस्सेसे कसिये प्राणवायुकी कुछ भी हानि नहीं होती किन्तु गलेके स्थानमें पतली डोरीसे हौले भी फांसिये तो आकाश रुन्ध होजानेसे प्राण घुटकर मृत्यु वश होने लगता है। द्विदल अर्थात् भ्रूमध्यमें ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ प्रणव बीज उच्चारण होरहा है, जो महत्तत्व स्थान है अर्थात् सब तत्त्व जहांसे प्रगट होकर फिर उसीमें लय होजाते हैं और जहां ज्योतिही ज्योति कड़ोड़ों सूर्य्य समान दमकती हुई देख पड़ती है। सहस्रदलमें विसर्ग (:) बीज है जिससे सम्पूर्ण जगत उत्पन्न होता है यह गोपनीय रहस्य है साधकको गुरुमुख द्वारा यह भेद जानकर कुछ दिन मानसप्राणायामके अभ्यासके पश्चात आपसे आप बोध होजाताहै कि विसर्गसे कैसे जगत उत्पन्न है।

बीजोंके वाहन = (लँ) बीजका वाहन ऐरावत हस्ती; (वँ) का मकर; (रँ) का मेष (मेंढा); (यँ) का मृग; (हँ) का फिर हस्ती है इसका यह तात्पर्य्य नहीं है कि शरीरके भीतर ये सब पशु बैठे हैं किन्तु इनका मुख्य अभिप्राय यह है कि इन भिन्न २ स्थानोंमें वायु जिस तत्त्वके साथ मिलकर जिस पशुकी चालके समान चलता है वही उस बीजका वाहन है जैसे चतुर्दलमें वायु पृथ्वी तत्त्वके साथ मिलकर धीमे २ हस्तीकी चाल के समान चलता है इस कारण हस्ती वाहन कहा जाता है, प्रगट है कि पृथ्वी औ आकाश दोनों तत्त्व और तत्त्वोंसे स्थिर हैं इस कारण हस्ती दोनोंका वाहन है, ऐसेही षट्दलमें वायु जल तत्त्वके साथ मिल मकरकी चालके समान गुड़कता चलता है, प्रगट है कि सरिता, सागर, ताल इत्यादि में जलकी लहराती हुई चाल मकरके समान है। दशदलमें अग्नि तत्त्वके साथ मिल वायु मेंढाके समान चलता है, हांडीमें दाल पकतेहुए देख लीजिये। द्वादशदलमें वायु, वायुतत्त्वके साथ मिल मृगके समान छलांग भरता हुआ चलता है, प्रगट है कि जब डकार आती है वायु कलेजेसे मृगके समान छलांग मार मुंहसे बाहर आता है। षोड़शदलमें वायु आकाश तत्त्वके साथ मिल धीमे २ हस्ती समान चलता है। द्विदलमें ॐकार तत्त्वके कारण केवल नादही नाद होरहा है अतएव नादही अर्थात् अनाहतध्वनि वाहन है जिसकी चाल अद्वैत है किसी पशु पक्षीसे उपमा नहीं दी जासकती। सहस्रदलमें विसर्ग तत्त्वका वाहन बिन्दु (·) है जिसकी चालही नहीं वरु जितनी चाल हैं सब इसीसे निकल चल फिर इसीमें लय होजाती हैं अतएव अनिर्वचनीय है जिसका आनन्द योगीजन जानते हैं।

दलोंके रंग = चतुर्दल = रक्तवर्ण, षट्दल = गुलाबी सिंदूरवर्ण, दशदल = नीलवर्ण, द्वादशदल = लालवर्ण, षोड़शदल = धूम्रवर्ण है, इसका यह अर्थ नहीं कि ये सब भिन्न २ रंगोंसे रंगे हुए हैं किन्तु इनका अभिप्राय यह है कि रुधिरके अरुण रंग पर भिन्न २ तत्त्वोंका प्रतिबिम्ब पड़ने से जैसा रुधिर जिस स्थानमें देखपड़ता है तदाकार उन दलों (Plexus) का रंग कहागया, जैसे चतुर्दलमें रुधिर पर पृथ्वी तत्त्वका बिम्ब पड़ने से रक्तचन्दनके समान कुछ मटैला लाल, (रुधिरमें मिट्टी मिला दीजिये रक्त होजावेगा)। षट्दलमें रुधिर पर जलका बिम्ब पड़नेसे गुलाबी सिंदूर वर्ण (रुधिरमें जल मिला दीजिये गुलाबी होजावेगा), इसी प्रकार दशदल में अग्नि तत्त्वके कारण रुधिरका नील वर्ण (रुधिरको आग पर चढ़ाइये नीला होजावेगा)। द्वादशदलमें वायुके कारण रुधिर अत्यन्त गंभीर लाल (रुधिरको शुद्ध वायुमें छोड़िये लाल देख पड़ेगा)। षोड़शदलमें आकाश के कारण धुमैला (रुधिरको घन आकाशमें देखिये धुमैला देखपड़ेगा) जैसे सूर्य्यकी किरणें सवेर प्रातःकाल अरुणोदयके पूर्व औ पश्चात आकाशमें मिलनेसे धुमैली देखपड़ती है।

द्विदलमें ज्योति है इसकारण रुधिर पर ज्योतिका बिम्ब पड़नेसे श्वेत रंग, और सहस्रदलमें शून्यतत्त्वके कारण रुधिर शुभ्र स्फटिकके समान देख पड़ता है।

पद्मोंके यन्त्र = चतुर्दलका चतुरस्र (चौकोन); षट्दलका अर्धचन्द्राकार; दशदलका त्रिकोण; द्वादशदलका षट्कोण; षोड़शदलका वर्तुलाकार (गोल), द्विदलका लिङ्गाकार (लम्बा), सहस्रदलका पूर्णचन्द्र निराकार, इसका यह अर्थ नहीं कि लोहेकी अथवा जस्तेकी कमानीके सदृश कुछ चौकोन, गोल, लम्बा, शरीरके भीतर कोई कल लगा हुआ है किन्तु मुख्य अभिप्राय यह है कि जैसे रेलगाड़ी अथवा धुआंकश (Steamer) के एनजिन (Engine) में भिन्न २ यन्त्र, भिन्न आकारसे चक्कर खाते हुए कोई गोल, कोई त्रिकोण स्वरूपको बनारहा, कोई ऊपरसे नीचे और नीचेसे ऊपर निकल पैठरहा, कोई मस्तानेके समान दायें बायें हिल रहा, कोई चें, कोई पें, कोई कूं, कोई सूं, शब्द करता हुआ कहीं अग्निको धौंक २ कर बढ़ारहा, कहीं जलको गरम कररहा, कहीं वाष्प (Steam) बनारहा है, जैसे आपने धुआंकशके कन्ट [Cunt] को देखाहोगा कि घूम २ कर गोलाकार स्वरूप बनाता हुआ दोनों ओरके पहियों को चलारहा है और जुडी [Judy] ऊपरसे नीचे और नीचेसे ऊपर निकल पैठकर वाष्पको आगे बढ़नेकी शक्ति देरहा है, उसी प्रकार इस शरीर में भिन्न २ नाड़ियां वायुकी सहायतासे भिन्न प्रकार चक्कर खाकर जिस २ आकारसे भिन्न २ तत्त्वोंको बनातीहुई शरीरको उठने, बैठने, चलने, फिरने की शक्ति देरही हैं वही उन स्थानोंके यन्त्र हैं।

पद्मोंके देव और देवी = ब्रह्मके जिस विशेष अंश औ कला से इन पद्मोंके अन्तर्गत शरीरके भिन्न २ कार्य्य होरहे हैं वही उसका देव और उस अंशमें जो कार्य्य करनेवाली शक्ति है वही उसकी देवी कहीगई है; साधकोंको ध्यान द्वारा चित्तवृत्ति ठहराकर वृत्तिके साथ २ वायुको धीरे २

मूलाधारसे प्रत्येक पद्म होतेहुए ऊपर सहस्रदलतक लेजानेके निमित्त अपनी २ उपासना औ मतके अनुसार देव औ देवियोंका ध्यान करना चाहिये, किन्तु पूर्वके योगियोंने योग तन्त्रानुसार जिस पद्ममें जिस देव औ देवीका ध्यान किया है उसी मार्गसे चलना श्रेष्ठ जानकर (**महाजनो येन गतः स पन्थाः**) इस ग्रन्थमें उनहीं देव औ देवियोंकी साकार मूर्तियां उसी निमित्त चित्रित कीगई हैं।

सहस्रदलमें तो विशेष कर गायत्री मन्त्र पढ़ते हुए अपने २ इष्ट देवहीका ध्यान, साकार हो वा निराकार, करना चाहिये जैसा कि सहस्रदल की व्याख्यामें आगे वर्णन कियागयाहै।

पद्मोंका ध्यानफल = भिन्न २ चक्रोंके ध्यान करनेसे भिन्न भिन्न फल होते हैं, अर्थात् ध्यान करनेवाला विशाल बुद्धिमान, उत्तम वक्ता, श्रेष्ठकवि, शान्तचित्त, सर्वहितकारी, आनंदस्वरूप, विद्वान, काम क्रोध आदि विकार रहित, आरोग्य औ चिरंजीवी हो जाता है, इसका कारण यह है कि मनुष्यके मस्तिष्कमें भिन्न २ शक्तियां हैं जो **कपालशास्त्रवेत्ता** अर्थात् मस्तिष्कविद्या जाननेवाले भली भांति जानते हैं, हमारे भारतसे तो इस समय यह विद्या जो **सामुद्रिक**का एक अंग है, जिसको अंगरेज़ीमें 'Phrenology' कहते हैं एकदम लोपही होगई है, कहीं किसी कोनेमें दो एक पुरुष जाननेवाले भी हैं तो वह किसीको नहीं बतलाते, किन्तु स० १७०० सदीके अन्तमें जरमनी (Germany) के रहनेवाले **डाक्टर गौल** (Dr. Gall) * ने इसी देशकी पुस्तकोंको ढूंढ २ कर यह विद्या अंग्रेज़ीमें भली भांति फैलाई है, जिसको अंग्रेज़ी जाननेवाले विद्वान देखकर अच्छे प्रकार समझसकतेहैं कि मनुष्यके मस्तिष्कमें सात खंड हैं, जिनमें मुख्य २ सात शक्तियां हैं (देखो पृष्ठ **क** मस्तिष्क चित्र न० २ +), इनहीको **सप्तशक्ति** कहते हैं इनहीं सातोंको सातों पद्मोंसे सम्बन्ध है। फिर इन सातों शक्तियोंमें एक २ के अन्तर्गत कई भिन्न २ सत्तायें हैं जो गिनतीमें ५० हैं, किन्तु इन पचासों सत्ताओंमें केवल ४२ सत्तायें **कपालशास्त्र** द्वारा आजतक प्रगट हुई हैं (देखो पृष्ठ **क** मस्तिष्क चित्र न० ३†) आठ सत्तायें और गुप्त हैं जो योगियोंको केवल योगही विद्या द्वारा जाननेमें आती हैं और इनहीं आठों सत्ताओंसे अष्टसिद्धियां केवल योगीजनोंको लाभ होती हैं और इन आठों सत्ताओंका भेद गुरुमुख द्वारा जाना जाता है क्योंकि यह विद्या हृदयसे हृदयतक चली आरही है, अक्षरों द्वारा प्रगट करना कठिन है। अब यह भी जानना चाहिये कि मस्तिष्कके उक्त भिन्न २ शक्तियोंको षट्चक्रोंके साथ नाड़ियोंके द्वारा तारबरकी (Telegraph) **दूरस्थवार्त्तबोधकलौहयन्त्र**के समान लगाव (संयोग) है जैसे किसी एक स्थान के तारमें चोट देनेसे हज़ारों कोसकी दूरी पर उसकी बात झट दम मारते पहुंच जाती है, उसी प्रकार ध्यान द्वारा किसी चक्र पर मन औ वायुका बल पड़नेसे वह बल एकदम मस्तिष्कके उस भागपर पहुंच जाता है जिससे उस चक्रको सम्बन्ध है, फिर जैसे किसी बन्द पुष्पके मुख अर्थात् कली पर वायुकी फूंक लगनेसे वह पुष्प खिलजाताहै उसी प्रकार ये शक्तियां जो पुष्पकी कली समान बन्द रहती हैं, चक्रोंके ध्यान द्वारा मन औ वायुका चोट लगनेसे खिल कर बढ़नेलगती हैं, इसी कारण भिन्न २ चक्रोंके ध्यानसे भिन्न २ शक्तियां वृद्धि पाकर पूर्वोक्त फलों को प्रगट करती है। किस चक्रके ध्यानसे क्या फल होता है, चक्रोंकी व्याख्यामें विधिपूर्वक वर्णन कियागयाहै॥ इति॥

शंका—इन चक्रोंमें जो दल, उनके रंग, उनके **अक्षर, तत्त्व, तत्त्वबीज**, उनके **वाहन**, उनके **देव** औ **देवियों**के तात्पर्य्य पूर्वमें कथन कियेगये, उनसे प्रगट होता है कि ये सब नाड़ियोंके गुच्छ, रुधिर के रंग, वायुके संग भिन्न २ तत्त्वोंके मेलसे नाड़ियोंकी चाल औ तत्त्वों की भिन्न २ शक्तियां हैं, फिर इनकी साकारमूर्ति बनाकर ध्यान करनेकी आवश्यकता क्यों? ॥

उत्तर—सर्व प्रकारकी सूक्ष्म विद्यायें जिनको केवल अन्तःकरण से सम्बन्ध है, बिना साकारमूर्तिके बनाये साधकोंको नहीं बताई जासकती, अतएव साधकोंके हितार्थ उनकी मूर्ति बनानेकी अत्यन्तही आवश्यकता है जैसे, अक्षर, अंक, बिन्दु, रेखा, राग, सुर, ताल, आत्मविद्या इत्यादि जो सूक्ष्म हैं मूर्ति द्वारा साधकोंको सुलभ रीतिसे बताई जासकती हैं। भली भांति विचार कर देखिये कि, अ, आ, क, ख, ग, इत्यादि जो केवल ध्वनिमात्र हैं मुखसे उच्चारण होते हैं, इनका कहीं भी कोई स्वरूप नहीं, किन्तु भिन्न २ देशके विद्वानोंने परस्पर लिखने पढ़ने औ शिक्षा देनेके निमित्त इन अक्षरोंकी साकारमूर्तियां अपनी २ रुचि अनुसार बनाली हैं, यदि ये मूर्तियां न होती तो हमलोग एक दूसरेके मनकी बात दूरस्थ होकर कदापि नहीं जानसकते, यह साकारमूर्तीही की महिमा है कि हज़ारों लाखों कोसों दूर बैठेहुए एक दो अंगुलके पत्र पर इन अक्षरोंकी मूर्तियां बना डाक या तार द्वारा झट अपने मनकी बात प्रकट कर दीजिये। फिर इनहीं मूर्तियों (अक्षरों) के प्रभावसे बड़े २ वकील, मुख़्तार, जज, कलक्टर, हज़ारों रुपये उपार्जनकर सुखी होरहेहैं! फिर **रेखागणित** (Geometry) की ओर थोड़ी दृष्टि दीजिये कि जिस विद्याके जाननेसे मनुष्य बहुत बड़ा बुद्धिमान होकर नाना प्रकारके यन्त्रों अर्थात् कलोंको बना अद्भुत कार्य्योंको कर दिखलाता है, जिस विद्या द्वारा नानाप्रकारके मकान, सड़क, नहर, कूप, बावलीकी रचनामें औ क्षेत्रोंके मापलेनेमें अत्यन्त प्रवीण होजाता है, वह विद्या केवल सूक्ष्म बिन्दुपर निर्भर है, जो निराकार है, अंग्रेज़ी पढ़नेवाले भी पढ़ाकरते हैं कि A point is that which has no part and has no magnitude. अर्थात् बिन्दु वह है जिसका खंड नहीं होसकता और उसका कुछ प्रमाण नहीं, किन्तु स्कूलोंमें जाकर देखिये कि शिक्षक (मास्टर साहब) ने हाथमें एक खड़ी मिट्टीका खंड (Chalk) ले पाट (तोड़े) के समीप जा एक बन्दूककी गोली समान बिन्दु बना बोलउठे कि Boys! Let it be granted that A (.) is a given point. अर्थात् विद्यार्थियो मानलो अर्थात् स्वीकार करलो कि अ (.) यहएक

* Near the close of the last century the physiology of the brain became the subject of special investigation by an eminent physician of Germany, Dr. Gall, and he claimed that he had discovered signs of character in the brain, that it can be safely studied as the basis of character, and that whatever the face or attitudes or motions may reveal, the impulse comes from the brain. His mode of investigation has acquired the name of Phrenology.

× इसकी व्याख्या पृष्ठ ६ में है देखलेना।

† इसकी ,, ६,७,८, में है देखलेना।

कल्पित बिन्दु है। अब देखिये कि यथार्थ बिन्दुका बनाना असंभव जानकर शिक्षकको बिन्दुकी कल्पित साकार मूर्ति बनाकर साधकोंको बतानी पड़ी। ऐसेही रागरागिनी, सुरताल इत्यादिके सिखानेके निमित्त साकार रेखाओं द्वारा अनेक पुस्तकें बनी हैं, जिनको देखकर यन्त्र बजानेवाले औ सुरतानके अलापनेवाले गानविद्यामें अतिही प्रवीण हो जाते हैं। एवम् प्रकार और भी अंक १, २ इत्यादि विद्याओंको जानना विस्तारके भयसे नहीं लिखा। इसी प्रकार योगियोंने योगविद्या साधन निमित्त सकल सूक्ष्म शक्तियोंकी साकार मूर्तियां बनाली हैं जिनके ध्यान मात्रसे चित्तवृत्ति निरोध हो समाधि लाभ होजाती है और वर्णमालाके सदृश इनहीं साकार मूर्तियोंके द्वारा एक योगी दूसरेसे परस्पर हज़ारों कोस दूर बैठेहुए बार्ता करलेता है।

फिर दूसरी बात यह है कि जितनी वस्तु आपके सन्मुख रखी हुई हैं वे सब आदिमें निराकार रहती हैं, मध्यमें साकार हो कार्य्य साधन कर फिर निराकार होजाती हैं। जैसे सलाई अथवा चकमक पत्थरकी आग जो पूर्वमें निराकार रूप रहती है फिर मध्यमें प्रगट हो काष्ठोंके संयोगसे पाक इत्यादि कार्य्योंको साधन कर अन्तमें निराकार होजाती हैं ऐसेही अन्न, जल, वस्त्र, फल, फूल इत्यादिको भी जानना। अब जानना चाहिये कि ऊपर कथन कीहुई वस्तुओंके अनुसारही योगीलोग भी शरीरस्थित सूक्ष्मतत्त्वोंको अभ्यासकालमात्र साकार ध्यानकर चित्तवृत्तिको एकाग्र करतेहैं, जब वृत्तिकी एकाग्रता लागकर ब्रह्मरन्ध्रमें प्रवेशकरजातेहैं तब वे शान्तचित्त, त्रिलोकदर्शी, आत्मज्ञानी हो जन्म मरणके बन्धनसे छूट अपने २ इष्टमें लीन होजाते हैं, और ये शक्तियां अपने २ स्थानमें निराकार रूप हो सुस्थिर होजाती हैं।

अब इस स्थानमें साधकोंके बोध निमित्त कपालशास्त्रका संक्षिप्त वर्णन किया जाता है जिसके पढ़नेसे दृढ़ निश्चय होजायगा कि मस्तिष्क में भिन्न २ शक्तियोंका निवास है जो चक्रोंके ध्यान करने से बढ़ती हैं और एक जन्मकी बढ़ीहुई शक्ति दूसरे जन्ममें संस्कार होकर उच्च गतिको देती है, इसी कारण योगक्रिया करनेवाला पुरुष "शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोभिजायते" इस गीताके श्लोकानुसार पूर्व संस्कारानुकूल उच्चगतिको पाताहुआ कई जन्मोंके पश्चात् मुक्त होजाताहै।

"पृष्ठ क के अंक न० २" वाले चित्रमें मुख्य सप्तशक्तियां जो अंकितकर दिखाईगई हैं उनके नाम ये हैं— १. **आश्रमिका** (Domestic Propensities) नाड़ियों द्वारा इसको **द्वादशदलपद्म** से सम्बन्ध है। २. **स्वसंरक्षणी** (Selfish Propensities) इसको **दशदलपद्म** से सम्बन्ध है। ३. **स्वोत्कर्षणी** (Selfish Sentiments) इसको **षट्दलपद्म** से सम्बन्ध है। ४. **सत्प्रवर्तनी** (Moral Sentiments) इसको **सहस्रदलपद्म** से सम्बन्ध है। ५. **मनः प्रवर्तिका** (Semi-intellectual Sentiments) इसको **चतुर्दलपद्म** से सम्बन्ध है, फिर छठवीं शक्ति **बुद्धिप्रवर्तिका** (Intellectual Sentiment) है जिसके दो भाग हैं। ६. **विषयग्राहिणी** (Perceptiveness) इसको **द्विदलपद्म** से सम्बन्ध है।

७. **विवेचनी** (Reason) इसको **षोड़शदलपद्म** से सम्बन्ध है॥

अब उक्त सातों शक्तियोंमें एक एक के अन्तर्गत बहुतेरी भिन्न २ सत्तायें हैं जो सब मिलकर ९० हैं किन्तु इनमें आठ गुप्तरूपसे निवास करती हैं और केवल योगीजनोंको काम देती हैं और ४२ सत्तायें **कपालशास्त्र** द्वारा प्रगट कीगई हैं जिनसे सर्व साधारण मनुष्य और पशुपक्षियोंके कार्य्य सिद्ध होते हैं, इन ४२ सत्ताओंके स्थान (पृष्ठ क के चित्र न० २) में अंकित कर देखलायेहुएहैं, इनहींमें से जौन अंकवाला स्थान कुछ ऊंचा अथवा लम्बाचौड़ा औ पुष्ट किसी प्राणीके मस्तकमें देखाजावे तो जानलेनाचाहिये कि वह सत्ता उसमें अधिक होगी॥

अब उन अंकित स्थानोंकी सत्ताओंके नाम उनके कार्य्य सहित वर्णन कियेजाते हैं। १. **आश्रमिकाशक्ति**=(Domestic Propensities) इसके अन्तर्गत **६ सत्तायें** हैं—१. **स्नेहसत्ता** (Amativeness) जिस प्राणीके गर्दनसे ऊपरवाला भाग कुछ ऊंचा औ उठा हुआ पुष्ट होगा, उसमें यह सत्ता अधिक होगी इसकारण वह स्नेही होगा। [क.] **सम्मिलन सत्ता** (Conjugality) इस सत्तावाले प्राणीको स्त्री पुरुषमें अधिक मेल होगा, जैसे 'नल, दमयन्ती,' 'अज, इन्दुमती'। पशुपक्षियोंमें भी जिनमें यह सत्ता अधिक है उनके जोड़ोंमें मेल होता है, जैसे व्याघ्र, कपोत इत्यादि। २. **पितृप्रेमसत्ता** (Parental Love) इस सत्तावालेको अपने बालबच्चोंसे अधिक स्नेह होता है। ३. **मैत्रीसत्ता** (Friendship or Adhesiveness) इस सत्तावालेको भाइयों, बहनों, पड़ोसियों, संगियों, सखाओंमें अधिक मेल होता है। ४. **निवासानुरागसत्ता** (Inhabitiveness) इस सत्तावालेको घर से अधिक स्नेह होताहै। ५. **अपरिच्छेदसत्ता** (Continuity) इस सत्तावाला प्राणी अपने इष्टकार्य्यमें सतत ऐसा लगजाता है कि किसी दूसरी ओरकी सुधि एकदम नहीं रखता, सब काममें तत्पर होजाता है, जीलगाकर करता है॥

२. **स्वसंरक्षणीशक्ति**=(Selfish Propensities) इसके अन्तर्गत **६ सत्तायें** हैं—१।(ख) **प्राणस्नेहसत्ता** (Vitativeness) इस सत्तावालेको अपने प्राणकी रक्षामें बड़ी सावधानता रहती है, पशुपक्षियोंमें व्याघ्र, बिल्ली, श्येन आदिमें यह सत्ता अधिक होती है। २।९. **शौर्य्यसत्ता** (Combativeness) इस सत्तावालेके कानका ऊपर भाग ऊंचा औ पुष्ट होगा, औ शत्रुओंसे झट सामना करबैठेगा, जैसे पशुओंमें कुत्ता जो व्याघ्र पर भी दौड़जाताहै। ३।७. **संहारसत्ता** (Destructiveness) इस सत्तावालेके मस्तकका पिछला भाग कानसे कानतक अधिक चौड़ा होगा। मांसाहारी पशुपक्षियोंमें यह अधिक होती है, जैसे व्याघ्र, कुत्ते, भेड़िये इत्यादि औ घासाहारियोंमें कम जैसे घोड़े, ऊंट इत्यादि। ४।८. **पोषणसत्ता** (Alimentiveness) इस सत्तावालेको भोजनमें अतिशय श्रद्धा होतीहै औ अतिथि सत्कार अर्थात् पाहुनोंको भोजन इत्यादि बड़ी श्रद्धासे कराताहै। ५।९. **उपार्जनसत्ता** (Acquisitiveness) इस सत्तावालेको भविष्यकालके सुख निमित्त द्रव्य, अन्न, विद्या इत्यादिके उपार्जन करनेकी बड़ी श्रद्धा रहती है, कीटोंमें चींटी (पिपीलिका) में यह सत्ता विशेष है। ६।१० **गोपन**

सत्ता (Secretiveness) इस सत्तावाला अकेला रहना अधिक स्वीकार करता है औ अपने मनकी बातोंको दूसरे पर प्रगट करने नहीं चाहता ॥

३. स्वोत्कर्षणीशक्ति=(Selfish Sentiments) इस शक्तिके अन्तर्गत चार सत्तायें हैं । **१।११. सावधानतासत्ता** (Cautiousness) इस सत्तावाले सब कार्य्य बड़ी चतुराईसे करते हैं विशेष शत्रुओंसे जान बचानेमें बड़े सावधान रहते हैं। **२।१२. सम्मान सत्ता** (Approbativeness) इस सत्तावालेको सदा ऐसे कार्य्य करनेकी अभिलाषा रहती है जिससे सर्व साधारण मान करें । **३।१३. आत्मश्लाघासत्ता** [Self Esteem] इस सत्तावालेको अपनी प्रशंसा औ अपनी पदवीके आदर करानेकी बड़ी अभिलाषा रहती है । **४।१४ दार्ढ्यसत्ता** (Firmness) इस सत्तावालेको अपने कार्य्यकी पूर्तिमें घबराहट नहीं होती, बड़े धीरजसे कार्य्य कर पूरा करही छोड़ताहै ॥

४. सत्प्रवर्तिकाशक्ति=[Moral Sentiments] इसके अन्तर्गत ९ पांच सत्तायें हैं । **१।१५. अन्तःकरणशुद्धिसत्ता** [Concientiousness] इस सत्तावाला पुरुष सब काम बिना पक्षपातके ठीक ठीक करता है, सचाईकी ओर दृढ़ रहता है, सदा सत्य बोलनेकी चेष्टा करता है । **२।१६. एषणा वा आशासत्ता** [Hope] इस सत्तावाला प्राणी आगे आनेवाले किसी समयमें अपनी अभिलाषाकी पूर्त्ति होने की आशासे सर्व कार्य्योंके करनेमें अत्यन्त तत्पर रहता है । **३।१७. आत्मज्ञानसत्ता** [Sprituality] इस स०वाले और भक्तिसत्ता [Veneration] वालेके मस्तकका मध्य भाग ऊंचा औ उठाहुआ होता है, औ सदा आत्मा, परमात्मा, देव, देवी, प्रेत, पितर, गंधर्व इत्यादि योनियोंमें विश्वास रखता है । **४।१८. भक्तिसत्ता** [Veneration.] इस स०वालेकी चांदी अवश्य ऊंची होगी, ईश्वर पूजामें औ दूसरोंके आदर भाव, सत्कार करनेमें प्रवीण होगा । **५।१९. उपकृतिसत्ता** [Benevolence] इस स०वाला प्राणी उदार, दयालु, सर्व हितकारी होताहै औ सर्व साधारणके उपकारमें तत्पर रहता है ॥

५. मनःप्रवर्तिकाशक्ति=[Semi Intellectual Sentiments] इसके अन्तर्गत पांच ९ सत्तायें हैं । **१।२० रचना सत्ता** [Constructiveness] इस स०वाला प्राणी भूषण, वस्त्र, शाल, दुशाले, महल, अटारी, टेब्ल, कुरसी, हल, मूशल, ओखल, थाली, लोटे, ग्लास इत्यादि पात्र जो मनुष्योंके आवश्यकीय पदार्थ हैं बनानेमें प्रवीण होता है, जिसमें यह स० अधिक होगी वह उत्तम चित्रकार औ शिल्प विद्यामें प्रवीण होगा । **२।२१. सुप्रतीकग्रहणसत्ता** [Ideality] इस स०वाला सृष्टिके सब पदार्थोंकी शोभा औ सौन्दर्य्यताको देखकर हर्षित होताहै ओ सब वस्तुओंको अलंकार युक्त रखनेकी चेष्टा करता है। **३।ग. काव्यसत्ता** (Sublimity) स्पष्ट है। **४।२२. अनुवर्तनसत्ता** [Imitation] इस स०वालेको दूसरोंके आचरण व्यवहार इत्यादिके अनुकरण करनेकी श्रद्धा अधिक होती है जैसे बच्चोंको मा बापका अनुकरण ओ आजकलके नवशिक्षितोंको कोट, पैटलून, सिगारेट आदि साहेबलोगका अनुकरण । **५।२३. प्रमोदसत्ता** [Mirthfulness] इस स०वालेके कपालका वाम ओ दक्षिण भाग जहां पर अंकति कर देखायागया है ऊंचा होता है, और वह सदा आनन्द चित्त रहताहै ।

अब जानना चाहिये कि **बुद्धिप्रवर्तिका** (Intellectual Sentiments) शक्तिके दो भाग हैं, **विषयग्राहिणी** (Perceptiveness) औ **विवेचनी** (Reason) ॥

६. विषयग्राहिणीशक्ति=[Perceptiveness] इसके अन्तर्गत द्वादश सत्तायें हैं। **१।२४. अविभक्तता स०** (Individuality) यह स० नासिकाके मूलसे थोड़ा ऊपर है, इस स० वालेको सृष्टिके सब वस्तुकी स्थितिमात्रका बोध होता है, जैसे बच्चे सबवस्तुओंको अपने समीप घसीट २ कर देखने लगते हैं, वे क्या औ उनसे हानि लाभ क्या यह नहीं जानते । **२।२५. रूपग्रहणसत्ता** [Form] इस स०वालेके नेत्र विशाल और आगेको निकलेहुए रहते हैं औ दोनों नेत्रोंमें अधिक अन्तर रहताहै औ रूप ग्रहण करनेकी विचित्र शक्ति होती, एकबार जिस रूपको देखता, चिरकालतक स्मरण रखता है । चित्र बनाने, सुन्दरअक्षर लिखने, बिना यन्त्रके गोल, त्रिकोण, चतुरस्र इत्यादि क्षेत्रोंके बनानेमें प्रवीण होताहै । **३।२६. प्रमाणग्रहणसत्ता** [Size] इस स०वालेको वस्तुओंकी छोटाई, बड़ाई, ऊंचाई, निचाईके भेद जाननेमें बड़ी प्रवीणता होती है, ओ अश्व, गऊ इत्यादिके क्रय विक्रयके समय लोग उनको अवश्य लेजाते हैं । **४।२७. गुरुता ग्रहण सत्ता** (Weigt) यह शक्ति भ्रूमध्यमें है, स०वालेको घोड़े इत्यादिके सरकश, नटबाजी, बाजीगरी, मस्तकपर घट रख एक पतली रस्सी पर पृथ्वी से ऊपर चलना और एक दूसरेके कन्धे पर खड़े हो पृथ्वीकी आकर्षणके प्रमाण पर ध्यान रखना, इत्यादि कामोंमें प्रवीणता होगी, इस स०वालेके लेखकी पंक्ति सीधी होगी, ऊपर नीचे नहीं होगी। **५।२८. वर्णग्रहण** (Colour) इस स०वालेकी भउहें कमानके सदृश अधिक बांकी होंगी । स०वानको रंगोंके बनाने, चित्रोंको उत्तम वर्णसे सुशोभित करनेमें बड़ी प्रवीणता होगी । **६।२९. व्यवस्थाग्रहणसत्ता** [Order] स०वान सर्व प्रकारकी व्यवस्था करनेमें प्रवीण होगा, गृह के भिन्न २ वस्तुओंको उचित स्थानोंमें सजकर रखेगा । **७।३०. अंक ग्रहणसत्ता** [Calculation] स०वान अंकविद्यामें अर्थात् गणितमें प्रवीण होगा, जैसे ज़िराकालबर्ण [Zerah colburn] जो इस स०में ऐसा प्रवीणथा कि जब वह ६ वर्षका था तब एकबार उससे प्रश्न किया गया कि १८११ वर्षोंमें कितने दिन औ घंटे होते हैं, उसने २० सिकेण्डमें उत्तर दिया कि ६६१०१५ दिन और १५८६४३६० घंटे, फिर प्रश्न किया गया कि ११ वर्षोंमें कितने सिकेण्ड होते हैं उसने चार सिकेण्डमें उत्तर दिया कि ३४६८९६००० सिकेंड । **८।३१. स्थान ग्रहणसत्ता** (Locality) स०वानको भिन्न २ नगरों, ग्रामोंके ठीक २ स्थान स्मरण रखनेमें कि कौन स्थान किस ओर कितने दूर है, प्रवीणता होगी, भूगोल [Geography] जाननेमें चतुर होगा । किसी २ पशु पक्षियोंमें भी यह स० अधिक होती है जैसे कुत्ता, सुना जाता है कि एक कुत्ता रूससे लौटकर अपने घर फ्रांस (France) चलाआया, पक्षी आकाशमें चारों ओर उड़कर सन्ध्यासमय फिर अपने घोंसलेमें लौट आते हैं, मधुमक्षिका [मधमक्खी] भिन्न फूलोंसे रस लेकर फिर उसी मार्गसे लौट आती हैं, इसकारण उनका मार्ग **मधुमक्षिका मार्ग** प्रसिद्ध है, इस स०वाले गेंद [Ball] औ बिलियार्ड [Billiard]

खेलनेमें ओ निशाना लगानेमें प्रवीण होते हैं, जिसमें यह स० कम होती वह प्रायः शहरोंका मार्ग इत्यादि भूलजाता है । ९।३२. वृत्तान्त ग्रहणसन्ता [Eventuality] इस स०वालेको इतिहास, पुराणके वार्ताओंकी स्मृति बहुत रहेगी ओ इतिहास विद्या [History] में प्रवीण होगा, कहानियोंके सुननेमें बड़ी रुचि रखेगा । १०।३३. कालग्रहणसन्ता [Time] इस स०वालेको समयकी स्मृति बहुत रहेगी, अमुक कार्य्य किस साल, किस मास, किस दिनमें, किस समय हुआथा ठीक २ स्मरण रखेगा, ओ ठीक समय पर काम करेगा, ऐसे पुरुषकी रेलगाड़ी अथवा स्टीमर [*Steamer*] जहाज़ कबही नहीं हाथसे छूटती । ११।३४. रागग्रहणसन्ता [Tune] इस स०वालेको गाने बजानेमें प्रवीणता होगी। १२।३५. वाग्व्यापारसन्ता [Language] स०वान उत्तम वक्ता ओ अनेक प्रकारके भाषाओंका जाननेवाला होगा ॥

७. विवेचनीशक्ति=[Reason] इसके अन्तर्गत चार सत्तायें हैं । १।३६. न्यायसन्ता [Causality] इस स०वालेके ललाट का अग्रभाग विशाल और ऊंचा होगा, स०वान विशाल बुद्धिमान, न्यायशास्त्र [*Science*] में प्रवीण होगा, औ ब्रह्म, सृष्टिका आदिकारण है, सिद्धान्त करेगा, चित्तवृत्तियोंके निरोधकी भी शक्ति इसमें विशेष रहेगी, जिसमें यह स० अत्यन्त तीव्र होती, वह नवीन विद्याओंका निकालनेवाला होगा, जैसे कपिलने सांख्य, व्यासने वेदान्त, भास्कराचार्य्यने पृथ्वीआकर्षण निकाला । इसी आकर्षण विद्याको सरस्येकनूतन (*Sir* Isasc Newton) ईरूप* अथवा ईयरूप [Europe] देशके रहनेवालेने निकाला । २।३७. उपमान सन्ता [Compaison] इस स०वालेके ललाटका मध्य भाग अधिक ऊंचा और उठाहुआ होगा, उत्प्रेक्षा इत्यादि अलंकार युक्त वचन बोलने, उपमान उपमेय इत्यादिके द्वारा सुन्दर काव्योंको सुशोभित करनेमें औ गद्य पद्यमें बृहस्पतिके तुल्य प्रवीण होगा, दो समान वस्तुओंके स्वल्पमात्र भेदकोभी निकाल देनेमें चतुर होगा, अपनी वक्तृतामें अलंकारयुक्त वाक्योंके द्वारा हजारों, लाखों मनुष्योंके चित्तको अपनी ओर खींच लेनेमें समर्थ होगा, ३।३८. मनुष्यत्त्वसन्ता [Human Nature] इस स०वालेको लोगों से मिलनेजुलने, मेलमिलापके साथ आदर भाव करने, अभ्यागतोंका विधि पूर्वक सत्कार ओ पहुनई करनेकी बहुतही श्रद्धा होगी । ४।३९. मृदुलता वा नम्रतासन्ता [Agreeableness, *Suavity*] इस स० वालेका स्वभाव ऐसा कोमल होता है कि सब छोटे बड़े प्रशंसा करतेहैं औ ऐसा पुरुष दीनतायुक्त अहंकार विहीन रहता है ॥ इति ॥

४२ सन्ताओंका वर्णन होचुका, शेष आठ गुप्त सन्तायें जो सत्यवर्तनीशक्तिके अन्तर्गत सहस्रदलपद्मकी कर्णिकामें गुप्त रूपसे हैं, वे ये हैं— अणिमा लघिमा प्राप्तिः प्राकाम्यं महिमा तथा । ईशित्वं च वशित्वं च तथा कामावसायिता ॥ इन शक्तियोंकी शुद्धि योग द्वारा केवल योगियोंहीको होती है ॥

* ई: कहिये लक्ष्मीको अथवा कामदेवको औ ऊंस कहिये फैलजानेवालेको । इसकारण लक्ष्मी ओ सुन्दरताईके कारण ईरूप औ सर्व देशमें फैलजानेके कारण ईयरूप (Europe) को कहते हैं ।

अथ नाड़ीवर्णनम् ।

मेरोर्बाह्यप्रदेशे शशिमिहिरशिरे सव्यदक्षेनिषण्णे ।
मध्ये नाडी सुषुम्णा त्रितयगुणमयी चन्द्रसूर्य्याग्निरूपा॥
धुस्तूरस्मेरपुष्पग्रथिततमवपुःस्कन्धमध्याच्छिरस्था ।
वज्राख्या मेढ्रदेशाच्छिरसिपरिगता मध्यमेऽस्याज्वलन्ती ॥१॥ तन्मध्ये चित्रिणीसा प्रणवविलसिता योगिनांयोगगम्या । लूतातन्तूपमेया सकलसरसिजान् मेरुमध्यान्तरस्थान् ॥ भित्त्वा देदीप्यते तद्ग्रथनरचनया शुद्धबुद्धिप्रबोधा । तस्यान्तर्ब्रह्मनाडी हरमुखकुहरादादिदेवान्तरस्था ॥२॥ विद्युन्मालाविलासा मुनिमनसिलसत्तन्तुरूपा सुसूक्ष्मा । शुद्धज्ञानप्रबोधा सकलसुखमयी शुद्धबोधस्वभावा ॥ ब्रह्मद्वारं तदास्ये प्रविलसति सुधाधारगम्यप्रदेशम् । ग्रन्थिस्थानं तदेतत् वदनमिति सुषुम्णाख्यनाड्या लपन्ति ॥३॥

भाष्यम्—मेरोरिति । मेरो मेरुदण्डस्य बाह्यप्रदेशे बहिर्भागे सव्यदक्षे वामदक्षिणपार्श्वे शशिमिहिरशिरे शशिशिरा ईड़ा मिहिरशिरा पिङ्गला इति द्वे नाड्ये निषण्णे स्थिते, अर्थात् ईड़ा वामभागे पिङ्गला दक्षिणभागे च वर्तत इत्यभिप्रायः । मध्येनाड़ी सुषुम्णा मेरोर्मध्य भागे सुषुम्णानाम्नी नाड़ी शिरा आस्ते । कीदृशी त्रितयगुणमयी रजस्तमस्सत्वगुणस्वरूपा अथवा त्रिगुणितरज्जूस्वरूपा । पुनः कीदृशी चन्द्रसूर्य्याग्निरूपा चन्द्रश्च सूर्य्यश्च अग्निश्च ते चन्द्रसूर्य्याग्नयः तेषांरूपमिव रूपं यस्यास्तादृशी । अतीवप्रकाशमानेत्यर्थः । पुनः कीदृशी धुस्तूरेति धुस्तूरस्ययत् स्मेरपुष्पं प्रस्फुटितकुसुमं तद्वत् ग्रथिततमं अतिशयेन प्रसृतंवपुः तनुर्यस्यास्तादृशी । प्रफुल्लधुस्तूरपुष्पाकारेत्यर्थः । पुनः कीदृशी स्कन्धमध्यात् स्कन्धयोर्मध्यदेश मभिव्याप्य [ल्यप् लोपेति] अत्र "कर्मणि पञ्चमी" । शिरःस्था शीर्षस्था शिरःस्थसहस्रदलपद्मान्तर्गतेत्यर्थः । अस्याः सुषुम्णाया मध्यमे मध्यदेशे ज्वलन्ती दीप्तिंकुर्वती वज्राख्या वज्रानाम्नी नाड़ी, आस्त इति शेषः । वज्राख्या कीदृशी मेढ्रदेशात् लिङ्गदेशात् शिरसि मस्तके परिगता प्राप्ता । मेढ्रदेशमारभ्य शीर्षपर्य्यन्तं व्याप्तेत्यर्थः ॥ मेरुदण्डस्य वाम भागे चन्द्राधिष्ठिता ईड़ा नाम्नी नाड़ी दक्षिणभागे सूर्य्याधिष्ठिता पिंगलाभिधाना मध्ये च चन्द्रसूर्य्याग्न्य-

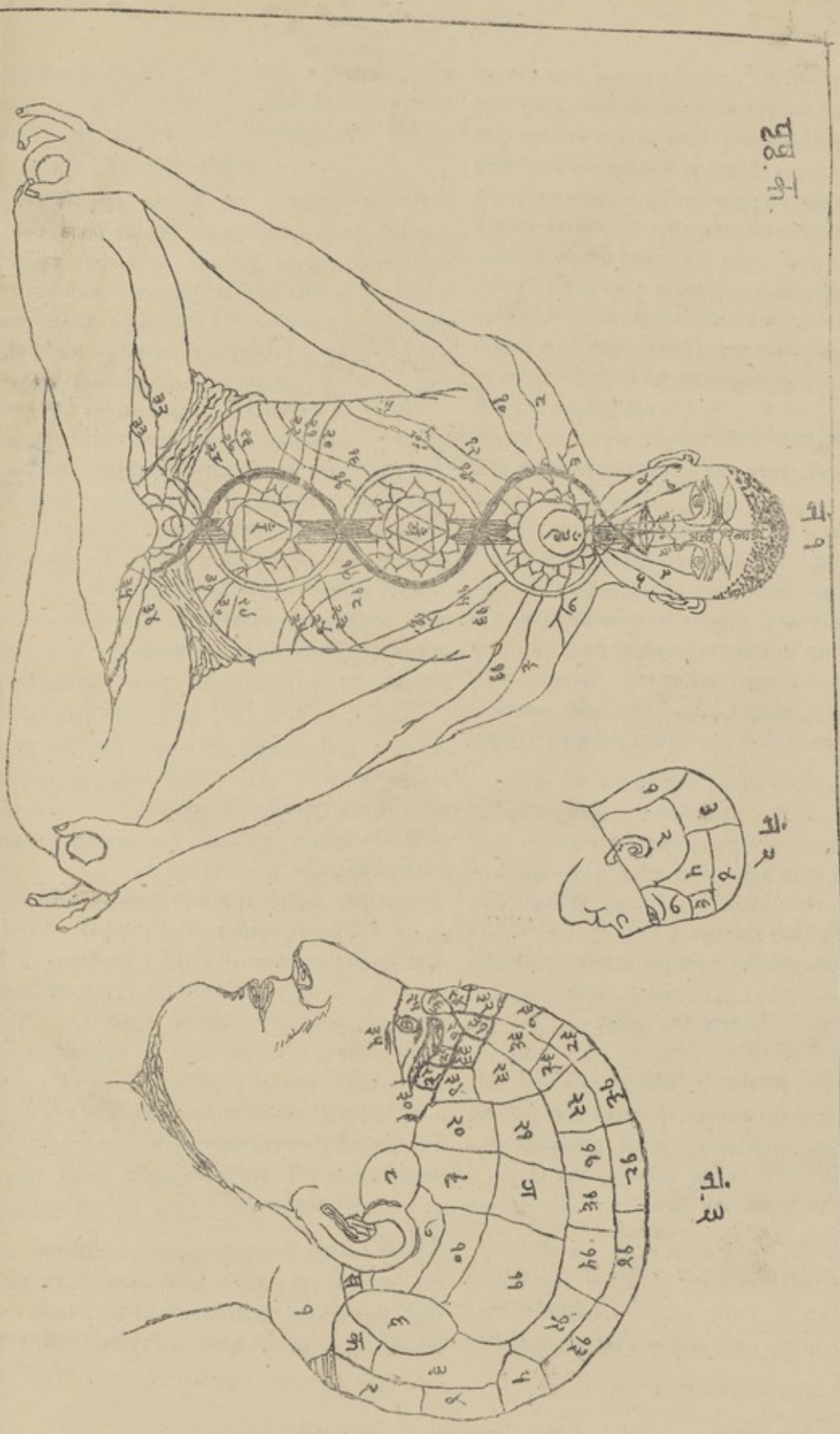

धिष्ठिता सुषुम्णानामिकेति नाड्यः सन्ति । **वज्राख्या नाड़ीतु तस्याः सुषुम्णाया मध्यप्रदेशे मेंढ्रदेशमारभ्य शिरःपर्य्यन्तं परिगतास्तीति** भावार्थः। (स्रग्धरावृत्तम् । तल्लक्षणंवृत्तरत्नाकरे। अम्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्) ॥१॥

तन्मध्य इति—तन्मध्ये तस्या वज्राख्याया नाड्या मध्ये **सा** प्रसिद्धा **चित्रिणीनाम्नी** नाड़ी **सकलसरसिजान्** मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूरक, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञाख्येति षट्पद्मानि **भित्त्वा** छित्त्वा **देदीप्यते** अतिशयेन प्रज्वलति । सरसिजान् कीदृशान्, **मेरुमध्यान्तरस्थान्** पृष्ठवंशमध्यावकाशस्थितान्। चित्रिणी कीदृशी, **प्रणवविलसिता** प्रणवः ॐकारः तेन विलसिता शोभिता युक्तेत्यर्थः। पुनः की०, **योगिनां योगगम्या** योगाभ्यासरतानां ध्यानेन गम्या ज्ञेया। पुनः कीदृशी, **लूतातन्तूपमेया** मर्कटकसूत्रवत् सूक्ष्मा। **तस्यान्तः** तस्याश्चित्रिण्या **अन्तर्मध्ये ब्रह्मनाड़ी,** आस्त इतिशेषः । कीदृशी, **तद्घनरचनया** तेषां षट्पद्मानां ग्रन्थिविधानेन **शुद्धबुद्धिप्रबोधा** शुद्धा निर्मला यावुद्धिस्तस्या प्रबोधा प्रबोधकारिणी, मूलाधारादिषट्पद्मग्रन्थनेन साधकानां स्वच्छगतिं जनयित्रीतिभावः । पुनः कीदृशी, **हरमुखकुहरात्** हरस्य स्वयम्भूलिङ्गस्य मुखकुहरात् मुखरन्ध्रात् **आदिदेवान्तरस्था** आदिदेवः महादेवः तस्य अन्तरे समीपे तिष्ठति या तादृशी। स्वयम्भूलिङ्गमुखमारभ्य सहस्रदलपद्मकर्णिकान्तर्गतपरमशिवसमीपस्थेत्यर्थः। **मेरोरन्तर्गतसकलसरसिजान् भित्त्वा तद्रन्ध्रगताया प्रदीप्यमानायास्तस्याश्चित्रिण्यामध्ये स्वयम्भूलिङ्गमुखरन्ध्रादारभ्य सहस्रदलान्तर्गतपरमशिवसमीपस्था ब्रह्मनाड़ी संतिष्ठति इतिभावार्थः** [स्रग्धरा वृत्तम्] ॥२॥

विद्युन्मालेति—पुनः कीदृशी, **विद्युन्मालाविलासा** विद्युन्माला विद्युत्तत्समूहस्तद्वत् विलासो दीप्तिर्यस्यास्तादृशी। पुनः कीदृशी **मुनिमनसि** मननशीलानां मनसि चित्ते **लसत्तन्तुरूपा** लसत् भासमानं तन्तुवत् सूत्रवद्रूपमाकृतिर्यस्यास्तादृशी । पुनः कीदृशी, **सुसूक्ष्मा** अतिशयसूक्ष्मा क्षीणा वा । पुनः कीदृशी, **शुद्धज्ञानप्रबोधा** शुद्धज्ञानस्य तत्त्वज्ञानस्य प्रबोधःप्रकाशो यस्यास्तादृशी । पुनः कीदृशी, **सकलसुखमयी** समस्तसुखस्वरूपा । पुनः कीदृशी, **शुद्धबोधस्वभावा** शुद्धबोधो निर्मलज्ञानमयः स्वभावो यस्यास्तादृशी । **तदास्ये** तस्याब्रह्मनाड्या आस्ये मुखे **ग्रन्थिस्थानम्** संधिस्थानं, पद्मानामितिशेषः । **प्रविलसति** प्रकर्षेण शोभते वर्तत इत्यर्थः । कीदृशं **ब्रह्मद्वारं** ब्रह्मा सृष्टिकर्त्ता द्वारेयस्यतत् । पुनः कीदृशं, **सुधाधाररम्यप्रदेशम्** सुधाधारेण अमृतसंपातेन रम्यप्रदेशं मनोरमस्थानम् । **तत्** प्रस्तुत मेतद् ग्रन्थिस्थानं **सुषुम्णाख्यनाड्या** सुषुम्णायाः शिराया **वदनमिति** मुखमिति **लपन्ति** कथयन्ति, योगिन इतिशेषः । **विद्युच्छ्रेणिप्रकाशाया अतिसूक्ष्मरूपायास्तस्या ब्रह्मनाड्या वदने ब्रह्मद्वारं पद्मानां ग्रन्थिस्थानं विलसति, तदेव योगिनः सुषुम्णा वदन मित्यालपन्तीति भावार्थः।** (स्रग्धरावृत्तम्) ॥३॥

भाषाटीका—अर्थात् मेरुदण्डके बाहरकी ओर बाम औ दक्षिण भागमें चन्द्र और सूर्य्य अधिष्ठिता दो नाड़ियां **ईड़ा** औ **पिङ्गला** नाम करके वर्तमान हैं, अर्थात् **ईड़ा** मेरुदण्डकी बायीं ओरसे औ **पिङ्गला** दाहिनी ओरसे लिप्टीहुईहै (देखो पृष्ठ **क** चित्र न० १) फिर इसी मेरुदण्डके मध्यमें **सुषुम्णा** नामकी नाड़ी है जो रज, सत, तम, तीनों गुणोंसे युक्त है, अथवा तीनगुणके सूत वा रज्जू ऐसी लिप्टीहुई **चन्द्र,** सूर्य्य, अग्नि करके अधिष्ठिता अर्थात् अत्यन्त प्रकाशमाना है, यह **सुषुम्णा** धतूरके पुष्प ऐसी खिलिहुई मूलद्वारसे निकलकर दोनों कंधोंके मध्य होतेहुए मस्तकमें सहस्रदलतक चलीगई है । इसी **सुषुम्णा** नाड़ी के मध्यमें एक दूसरी नाड़ी **वज्रा** नामकी लिङ्गदेशसे निकल मस्तकतक चमकतीहुई लगरही है ॥१॥

पूर्वोक्त **वज्रा** नामकी नाड़ीके मध्य, प्रणव अर्थात् ॐकारयुक्त मकरंके सूत ऐसी पतली, योगाभ्यासद्वारा योगियोंहीको विदित होनेवाली, **चित्रिणी** नामकी एक तीसरी नाड़ी मेरुदण्ड मध्यस्थित षट्चक्रोंको वेधती हुई प्रकाशमान होरही है, फिर इस **चित्रिणी** नाड़ीके मध्य एक और चौथी नाड़ी **ब्रह्मनाड़ी** नाम करके प्रसिद्ध षटपद्मोंको मालाके समान पिरोतीहुई औ साधकोंको शुद्ध ज्ञान देतीहुई **स्वयम्भूलिङ्गके** छिद्रसे निकल **सहस्रदलपद्मकी** कर्णिकामें स्थित आदिदेव अर्थात् **परमशिवके** समीपतक चलीगई है ॥२॥

फिर यह **ब्रह्मनाड़ी** बिजलीकी माला ऐसी चमकीली मुनियोंके हृदयस्थ ब्रह्मसूत्र ऐसी प्रकाशमाना, अत्यन्त पतली, शुद्धज्ञानकी देनेवाली, संपूर्ण सुखसे भरीहुई है । इसी ब्रह्मनाड़ीके मुखमें **ब्रह्मद्वार है** जो मूलाधारकी कर्णिकाके बीचमें लगीहुई है, जिसमुख होकर मस्तककी ओरसे अमृत टपक २ कर गिरता है, इसकारण यह स्थान अति रमणीय है । इसी ब्रह्मद्वारको पद्मोंका **ग्रन्थिस्थान** कहते है औ **सुषुम्णा**का मुख भी योगीलोग इसीको बताते हैं ॥३॥ (**सुषुम्णा, वज्रा, चित्रिणी, ब्रह्मनाड़ी,** इन चारोंका चित्र प्रत्येक पद्मोंके चित्रके ऊपर है देखलेना)।

विदित होवे कि साढ़ेतीनलाख नाड़ियोंमें ७२००० औ ७२००० मेंभी ३९ फिर उसमें १० उसमें भी तीन ईड़ा, **पिङ्गला, सुषुम्णा** मुख्य हैं। जो प्राणियोंके जीवनके कारण हैं, क्योंकि इस शरीरकी आयु प्राणही है। श्रुतिका वचन है कि "**प्राणं देवा अनुप्राणान्ति मनुष्याः पशवश्चये, प्राणो हि भूतानामायुः०**" तैत्तिरीयोपनिषत् । अर्थात् देवता भी प्राणही द्वारा जीवित हैं, जितने मनुष्य वा पशु हैं सब प्राणही करके जीवित हैं इसकारण भूतों अर्थात् जीवमात्रकी आयु प्राणही है, सो प्राण ईड़ा, पिंगला, **सुषुम्णा**के द्वारा प्रवाह करता है । दिनरातमें कबही ईड़ा, कबही **पिंगला,** कबही **सुषुम्णा**में प्राणवायु प्रवाह करता रहता है* । अर्थात् जैसे बहुतेरी छोटी २ नदियां भिन्न २ स्थानोंसे निकल गङ्गा, यमुना, सरस्वतीके साथ मिल सब एकधार हो सागरमें जागिरती हैं, ऐसेही शरीरकी सब नाड़ियां शरीरके सम्पूर्ण वायुके प्रवाह के संग बहतीहुई ईड़ा, **पिंगला, सुषुम्णा,** से मिल भ्रूमध्यमें सब एकत्र हो मस्तककी ओर सहस्रदलरूप सागरमें जामिलती हैं, इसी कारण **प्राणायाम** करनेसे सम्पूर्ण शरीरकी नाड़ियां शुद्ध होजाती हैं ॥

साधकोंके बोध निमित्त शरीरके मुख्य २ नाड़ियोंके स्थान (पृष्ठ **क** चित्र न० १) में अंकित कर देखलाये गये हैं जिनके नाम इस स्थान में वर्णन कियेजातेहै ।

* प्राणके प्रवाहकी चाल शिवस्वरोदयसे जानना ।

उक्त चित्रमें जो काली सर्पिणी ऐसी रेखा पद्मोंकी दाहिनी ओरसे लिप्टीहुई है वह पिंगला है और श्वेतरेखा जो बाम ओरसे लिप्टीहुई है वह ईड़ा है ॥

और जो दलोंके मध्य होकर कई पतली रेखायें एकसंग बीचोबीच देखपड़ती हैं वे सुषुम्णा, वज्रा, चित्रिणी औ ब्रह्मनाड़ी हैं। जो केदली के स्तंभके परदोंके समान एक दूसरेके भीतर होती चलीगई है। जिनका वर्णन पूर्वोक्त तीनों श्लोकोंमें होचुका ॥

अब इन ईड़ा, पिंगला, सुषुम्णाको छोड़ ३६ नाड़ियां और हैं– १. हस्तिजिह्वा—दक्षिण नेत्रमें। २. गान्धारी—बाम नेत्रमें। ३. अलंबुषा—मुखमें (ये सब नाड़ियां द्विदलसे निकली हैं)। ४. पूषा—दक्षिण कर्णमें। ५. यशस्विनी—बामकर्णमें। ६. वारुणा—दक्षिण स्कन्धके ऊपर भागमें। ७. एमारिका—बाम स्कन्धके ऊपर भागमें। ८. शीता—दक्षिण स्कन्धके मध्य भागमें। ९. मातृका—बाम स्कन्धके मध्य भागमें। १०. शिवा—दक्षिण स्कन्धके नीचे भागमें। ११. तिक्ता—बाम स्कन्धके नीचे भागमें। १२. श्वेतवती—दक्षिण कक्ष (कांखा) के ऊपर भा०। १३. बाला—बामकक्ष (कांखा) के ऊपर भा०। १४. अमृता—दक्षिण कक्षके निचले भागमें। १५. सरस्वती—बामकक्षके निचले भागमें (अंक ६ से लेकर १५ तककी सब नाड़ियां षोड़शदल से निकली हैं)। १६. पीता—दक्षिण हृदयके ऊपर भा०। १७. नीला—दक्षिण हृदयके नीचे भा०। १८. वृन्दा [पयस्विनी]—बाम हृदयके ऊपर भा०। १९. तारका—बाम हृदयके नीचे भा० (अंक १६ से १९ तककी सब नाड़ियां द्वादशदल से निकली हैं)। २०, २१, २२, विश्वोदरी, अतीता, तारा—दक्षिण कुक्षिके ऊपर भा०। २३. २४, २५, सारदा, माधवी, तारका—बाम कुक्षिके ऊपर भा०। २६, २७, २८, इल्तिका, युक्ता, शुक्रा—दक्षिण कुक्षिके नीचे भा०। २९, ३०, ३१, इल्ता, विजोलिका, काली—बाम कुक्षिके नीचे भा० (अंक २० से ३१ तककी सब नाड़ियां दशदल से निकली है)। ३२, ३३, सूत्रा, कुहू—दक्षिण कटिके ऊपर नीचे भागमें, जिसमें कुहू लिङ्गस्थानमें है। ३४, ३५, विश्वा, अवन्तिका—बाम कटिके ऊपर औ नीचे भागमें (अंक ३२ से ३५ तककी सब नाड़ियां षड्दल से निकली हैं)। ३६. उक्त ३५ नाड़ियोंसे भिन्न एक छत्तीसवीं नाड़ी शंखिनी है जो गुदास्थानमें चतुर्दल से निकल कर सूक्ष्मरूपसे सहस्रदलतक लगीहुई है। (उक्त चित्रमें सिद्धासनके कारण चतुर्दल कमलका स्थान देखनहीं पड़ता, इसकारण यह नाड़ी गुप्तरूपसे जानना) ॥

उक्त प्रकार ३६ मुख्य नाड़ियां मेरुदण्डके बहिर्भाग (ऊपर भाग) से निकल अस्थिकोश में प्रवेश कर फिर दूसरी ओरसे छोटी २ नाड़ियां बन मेरुदण्डके अन्तर्भाग [भीतरवाले भाग] में लौटकर गिलगई हैं* इसकारण [३६ × २=७२] छत्तीसको दूना करदेनेसे सब मोटी पतली गिलाकर बहत्तर नाड़ियां मुख्यहुई, इन बहत्तरमें एक २ की हज़ार शाखायें होगई हैं इसकारण सब ७२००० बहत्तर हज़ार हुई, फिर इन ७२००० में शंखिनी की दोनों भागकी दो हज़ार नाड़ियोंको छोड़ शेष ७०००० नाड़ियोंकी पांच २ † शाखायें होकर सब ३५०००० साड़ेतीन लक्ष नाड़ियां होगई हैं [देखो पृष्ठ २ श्लोक १, ६] ॥ इति॥

* शरीरपरिच्छेदशास्त्र [Anatomy] केअवलोकनसे ये बातें स्पष्ट जाननेमें आतीहैं।

† इनहीं पांचों होकर पांचों तत्त्व बहिर्मुख प्रवाह करते हैं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार कोभी इन पांचोंसे सम्बन्ध है, इनहींके विकारसे पांचों उत्पन्न होतेहैं।

अथ चतुर्दलपद्म वर्णनम् ।

अथाधारपद्मं सुषुम्णास्थलस्थं ध्वजाधोगुदोर्ध्वं चतुःशोणपत्रम् ॥ अधोवक्त्रमुद्यत्सुवर्णाभवर्णैर्वकारादिसान्तैर्युतं वेदवर्णैः ॥१॥ असुष्मिन्धरायाश्चतुष्कोणचक्रं समुद्भासिशूलाष्टकैरावृतन्तत् ॥ लसत्पीतवर्णं तडित्कोमलांगं तदंके समास्ते धरायाः स्वबीजम् ॥२॥ चतुर्बाहुभूषो गजेन्द्राधिरुढ स्तदंके नवीनार्कतुल्यप्रकाशः॥ शिशुः सृष्टिकारी लसद्वेदवाहुर्मुखाम्भोजलक्ष्मी श्चतुर्भागवेदः ॥३॥ वसेदत्र देवीच डाकिन्यभिख्या लसद्वेदवाहूज्ज्वला रक्त नेत्रा ॥ समानोदितानेकसूर्य्यप्रकाशा प्रकाशं वहन्ती सदा शुद्धबुद्धेः ॥४॥ वज्राख्या वक्त्रदेशे विलसति सततं कर्णिका मध्यसंस्थं। कोणं तन्त्रैपुराख्यं तडिदिवविलसत् कोमलं कामरूपम् ॥ कन्दर्पो नाम वायु र्विलसति सततं तस्य मध्ये समन्तात् । जीवेशो बन्धुजीवप्रकरमभिहसन् कोटिसूर्य्यप्रकाशः ५ तन्मध्ये लिंगरूपी द्रुतकनककलाकोमलः पश्चिमास्यो । ज्ञानध्यानप्रकाशः प्रथमकिसलयाकाररूपः स्वयम्भुः ॥ उद्यत्पूर्णेन्दुविम्बप्रकरकरचयस्निग्धसंतानहासी। काशीवासी विलासी विलसति सरिदावर्त्तरूपप्रकारः ॥६॥ तस्योर्ध्वे विषतन्तुसोदरलसत्सू-

क्ष्मा जगन्मोहिनी। ब्रह्मद्वारमुखं मुखेन मधुरंसाच्छादयन्तीस्वयम् ॥ शंखावर्तनिभा नवीनचपलामाला विलासास्पदा। सुप्ता सर्पसमा शिरोपरिलसत्सार्द्धे त्रिवृत्ताकृतिः ॥७॥ कूजन्ती कुलकुण्डली च मधुरं मत्तालिमालास्फुटं। वाचः कोमलकाव्यबन्धरचना भेदातिभेदक्रमैः ॥ श्वासोच्छ्वासविवर्त्तनेन जगतां जीवो यया धार्य्यते। सा मूलाम्बुजगह्वरे विलसति-प्रोद्दामदीप्तावली ॥८॥ तन्मध्ये परमाकला तिकुशला सूक्ष्मातिसूक्ष्मा परा। नित्यानन्दपरम्परातिचपलामालालसद्दीधितिः ॥ ब्रह्माण्डादिकटाह मेव सकलं यद्भासया भासते। सेयं श्री परमेश्वरी विजयते नित्यप्रबोधोदया ॥९॥ ध्याये त्ताम्मूलचक्रान्तरविवरलसत्कोटिसूर्य्यप्रकाशां। वाचामीशो नरेन्द्रः सभवति सहसासर्वविद्याविनोदी ॥ आरोग्यं तस्य नित्यं निरवधि च महानन्दचित्तान्तरात्मा। वाक्यैः काव्यप्रबंधैः सकलसुरगुरून् सेवते शुद्धशीलः ॥१०॥

॥ भाष्यम् ॥

अथाधारेति--अथ अनन्तरम्। आधारपद्मं मूलाधारपद्मम् अस्तीतिशेषः। कीदृशं **सुषुम्णास्यलग्नं** मेरुदण्डगध्यस्थिताया नाड्या आस्ये मुखे लग्नं युक्तम्। पुनः कीदृशं, **ध्वजाधो** ध्वजस्य लिङ्गस्य अधः अधोदेशे **गुदोर्ध्वे** गुदोपरि गुदायाद्वांगुलोपरीत्यर्थः। पुनः की०, **चतुःशोणपत्रं** चत्वारि शोणानि रक्तानि पत्राणि यस्यतत्। पुनः कीदृशम्, **अधोवक्त्रम्** अधोमुखम्। पुनः कीदृशं, **वेदवर्णैश्चतुर्वर्णैर्युतं** युक्तम्। वेदवर्णैः कीदृशैः, **वकारादिसान्तैः** वकार एव आदौयेषां ते वकारादयः स एव अन्ते येषां ते सान्ताः वकारादयश्चते सान्ताः वकारादिसान्तास्तैर्व, श, ष सेति चतुर्वर्णैर्युक्तमित्यर्थः। पुनः कीदृशैः, **उद्यत्सुवर्णाभवर्णैः** तप्तकांचनवर्णसदृशैः रक्तवर्णेषु चतुष्पत्रेषु पूर्व्वादिक्रमेण तप्तकांचनवर्ण व श ष सैर्युक्तं साधकैर्ज्ञेयमित्यर्थः। **सुषुम्णा मुखसंसक्तं** लिङ्गगुदयोरन्तरालेऽधोमुखं **तप्तस्वर्णाभ व श ष सेतिचतुष्टयाक्षराश्रयीभूतै श्चतुर्भिर्लोहितदलैर्युतं मूलाधारपद्ममास्त इतिभावार्थः।** (भुजंगप्रयात वृत्तम् तल्लक्षणं। चतुर्भिर्यकारैर्भुजंगप्रयातम् ॥१॥

असुष्मिन्निति—असुष्मिन् मूलाधारपद्मे धरायाः पृथिव्याः **तत्** प्रसिद्धं **चतुष्कोणचक्रं** चतुरस्रमण्डलं, वर्तत इतिशेषः। कीदृशं, **समुद्भासि** सम्यग्दीप्यमानम्। पुनः की०, **शूलाष्टकैराहृतं** अष्टसंख्यकैः शूलैर्वेष्टितं। तदंके तस्य चतुष्कोणस्य क्रोडे धरायाः पृथिव्याः **स्वबीजं (लँ) समास्ते** सम्यक्तिष्ठति। कीदृशं, **लसत्पीतवर्णं** दीप्यमानगौरवर्णम्। पुनः कीदृशं, **तडित्कोमलाङ्गं** विद्युदिवकोमलगात्रं यस्यतादृशम्॥ **तथाच, मूलाधारपद्मे अष्टसंख्यकशूलाहृतस्य पृथिव्याश्चतुष्कोणचक्रस्यमध्ये पृथ्वीबीजं पीतवर्णं (लँ) तिष्ठतीतिभावः।** (भुजंगप्रयातवृत्तम्) ॥२॥

चतुरिति—तदंके चतुष्कोणमण्डलमध्यवर्ति (लँ) रूपबीजक्रोडे **शिशुः सृष्टिकारी** बालस्वरूपः सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा, आस्त इतिशेषः। कीदृशः, **चतुर्बाहुभूषः** चतुर्भिर्बाहुभिर्भूषा भूषणं यस्यतादृशः चतुर्भिर्बाहुभिर्भूषित श्चतुर्भुज इत्यर्थः। पुनः की०, **गजेन्द्राधिरूढः** हस्तिश्रेष्ठ मैरावतमारूढ इत्यर्थः। पुनः की०, **नवीनार्कतुल्यप्रकाशः** नवीनो नूतनो योऽर्कस्तत्तुल्यस्तत्सदृशः प्रकाशोयस्यतादृशः प्रातःकालीनसूर्य्यसदृशरक्तवर्ण इत्यर्थः। पुनः की०, **लसद्वेदबाहुः** लसन्तो दीप्यमाना वेदाः सामादयो बाहुपुयस्य तादृशः। पुनः की०, **मुखाम्भोजलक्ष्मीचतुर्भागवेदः** मुखम्भोजे वदनसरोजे लक्ष्मीः सम्पति श्चतुर्भाग श्चतुःखंडो वेदो यस्य तादृशः अर्थात् सामादिचत्वारोवेदा ब्रह्मणोमुखे स्फुरन्तीत्यर्थः। **तथाच, मूलाधारपद्मे ऐरावतारूढ श्चतुर्हस्तो रक्तवर्णः शिशुरूपो ब्रह्मातिष्ठतीति फलितार्थः** (भुजंगप्रयातवृत्तम्) ॥३॥

वसेदिति--अत्र लँ रूपपृथ्वीबीजे **डाकिन्यभिख्या** डाकिनी नाम्नी **देवी** अपि **वसेत्** निवसति। सा डाकिनी की० **लसद्वेदबाहूज्ज्वला** लसद्भि र्दीप्तियुक्तै र्वेदबाहुभि श्चतुर्भुजैरुज्ज्वला प्रकाशमाना, चतुर्भुजेत्यर्थः। पुनः की०, **रक्तनेत्रा** रक्तनयना। पुनः की०, **समानोदितानेकसूर्य्यप्रकाशा** समानोदितानामेककालोदितानामनेक सूर्य्याणां द्वादशादित्यानां प्रकाशइव प्रकाशो यस्यास्तादृशी। पुनः की० **शुद्धबुद्धेः** शिशुरूपस्य ब्रह्मणः **प्रकाशं** लोकनिर्म्माणे स्फूर्तिं सदा सर्वसिस्काले **वहन्ती** सम्पादयन्ती। सृष्टिकर्तृत्वशक्तिंविना स्फूर्त्यभावेन किञ्चित् कर्तुमक्षमत्वात्। यद्वा शुद्धबुद्धेः स्वच्छज्ञानस्य प्रकाशं सदा सर्व्वदा वहन्ती जनयन्तीत्यर्थः। **लँ रूपपृथ्वीबीजस्यान्तर्ब्रह्मणोऽन्तिके निर्मलमतेर्योगिनोब्रह्मज्ञानं जनयन्ती, युगपत् कालोदितकोटि सूर्य्य इव प्रकाशयन्ती लोहितलोचना चतुर्भुजा डाकिनीनाम्नी शक्तिरप्यस्तीतिभावः** (भुजंगप्रयातवृत्तम्) ॥४॥

वज्रेति—**वज्राख्याववक्त्रदेशे** वज्रानाम्नी नाड़ी तस्यामुख प्रदेशे **कर्णिकामध्यसंस्थं** मूलाधारपद्मबीजकोशान्तःस्थं **तत्** प्रसिद्धं **त्रैपुराख्यं कोणं** त्रिकोणमिति यावत् **सततं** निरन्तरं **विलसति** शोभते। पुनः की०। **तडिदिव विलसत्** विद्युदिवप्रकाशमानं **कोमलं** मनोज्ञं **काम रूपं** कन्दर्पवत् मनोहराकारम्। **तस्य** त्रिकोणस्यमध्ये **समन्तात्** चतुर्दिक्षु **कन्दर्पो नाम वायुः** कन्दर्पाख्योऽनिलः **सततम्** निरन्तरं **विलसति** विलासंकरोति वर्त्तत इत्यर्थः। सः की०, **जीवेशः** प्राणरक्षकः **बन्धूजीवप्रकरं** रक्तवर्णमाध्याह्निकपुष्पाणांसमूहं **अभिहसन्** तिरस्कुर्व्वन्। बांधूलीपुष्पादप्यस्यातिशयरक्तवर्णत्वात्। पुनः की०, **कोटिसूर्य्यप्रकाशः** कोटिसंख्यकसूर्य्याणां प्रकाश इव प्रकाशो यस्य तादृशः। **मूलाधारपद्मकर्णिकान्तर्गतविशुद्धर्णस्य सततवज्रामुखप्रदेशवर्तमानस्य त्रिपुराख्यकोणस्यान्तः रक्तवर्णः कन्दर्पो नाम वायुर्वर्तत इतिभावार्थः** (स्रग्धरावृत्तम्) ॥५॥

तन्मध्य इति--तन्मध्ये तस्य त्रिकोणस्य मध्ये **लिङ्गरूपी**

लिङ्गाकारः स्वयम्भूः **विलसति** विलासंकरोति। की० **द्रुतकनककला-कोमलः** द्रुता द्रवीभूता या कनककला स्वर्णांशः तद्वत् कोमलः स्वर्ण वर्णः कमनीयमूर्तिरित्यर्थः। पुनः की०, **पश्चिमास्यः** अधोमुखः। पुनः की०, **ज्ञानध्यानप्रकाशः** ज्ञानेन तत्त्वज्ञानेन ध्यानेन समाधिना प्रकाशो यस्य तादृशः ज्ञानध्यानाभ्यां गम्य इत्यर्थः। पुनः की०, **प्रथमकिसलयाकाररूपः** प्रथमं नवीनं यत् किसलयं तदाकारं तादृशं रूपं सौदर्य्यं यस्य स नवपल्लववर्ण इत्यर्थः। पुनः की०, **उद्यदिति** उद्यतः उद्गच्छतः पूर्णेन्दुबिम्बप्रकरस्य पूर्णचन्द्रमण्डलसमूहस्य करचयो रश्मिराशिस्तस्य स्निग्धं रम्यं यत् सन्तानं विस्तृतिः तद्ग्रसति तिरस्करोत्येवंशीलः अतिशुभ्राकार इत्यर्थः। पुनः की०, **काशीवासी** काश्यां वासशीलः। पुनः की०, **विलासी** क्रीडनशीलः। पुनः की०, **सरिदावर्त्तरूपप्रकारः** सरिदावर्त्तः नदीजलभ्रमः तद्रूपप्रकारः तदाकारसदृशः। मूलाधार**पद्मकर्णिकान्तर्गतत्रिकोणमध्यवर्त्ती अधोमुखो ज्ञानध्यानैकगम्यो नवपल्लववर्णो लिङ्गरूपी स्वयम्भुर्वर्त्तेत इतिभावः** (स्रग्धरा वृ०) ॥६॥

तस्येति (युग्मम्)—**तस्योर्ध्वे** तस्य स्वयम्भूलिंगस्य ऊर्ध्वे उपरिभागे **मूलाम्बुजगह्वरे** मूलाधारपद्मरन्ध्रे **सा** प्रसिद्धा **कुलकुण्डली विलसति** विलासंकरोति वर्त्तते इत्यर्थः। सा की०, **विषतन्तुसोदरलसत्सूक्ष्मा** विषतन्तुर्मृणालसूत्रं तत्सोदरा तत्सदृशी लसन्ती प्रकाशमाना, साचासौ सूक्ष्मा तन्वी च, मृणालसूत्रवत् क्षीणाकारेत्यर्थः। पुनः की०, **जगन्मोहिनी** संसारमोहजनिका जगद्वशकारिणी वा! किं कुर्व्वती, **स्वयं** आत्मना **मधुरं** मनोहरं **ब्रह्मद्वारमुखं** सुषुम्णाख्यनाडीवदनं **मुखेन** निजवदनेन **आच्छादयन्ती** आवृण्वती। पुनः की०, **शंखावर्त्तनिभा** शंखस्य आवर्त्तो वेष्टनं तन्निभा तत्सदृशी शंखावर्त्तवद्वेष्टिता इत्यर्थः। पुनः की०, **नवीनेति** नवीना अभिनवोदिता या चपलामाला विद्युतश्रेणिः तद्वत् विलासास्पदा क्रीड़ास्थानस्वरूपा, तत्तुल्यप्रकाशमानेत्यर्थः। पुनः की०, **सुप्ता** कृतशयना **सर्पसमा** सर्पाकारा **शिरोपरि** स्वयम्भूलिङ्गोपरि **लसन्ती** दीप्तिंकुर्व्वती **सार्धत्रिवृत्ता** सार्धत्रयवेष्टनयुक्ता **आकृतिः** स्वरूपं यस्यास्तादृशी। (शार्दूल विक्रीडितवृत्तम्। तल्लक्षणम्। सूर्य्याश्वैर्मसजस्ततः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम्) ॥७॥

कूजन्तीति—पुनः किं कुर्व्वती, **कोमलेति** कोमलस्य मंजुलस्य काव्यबंधस्य काव्यसंदर्भस्य या रचना तस्या भेदातिभेदक्रमैः अतिशय भेद श्रव्यादिवृत्तानुसारयथास्थानपदविन्यासैः **मधुरं** मनोहरं **मत्तालिमास्फुटं** मत्ता या अलिमाला भ्रमरपंक्तिः तद्वत् तद्ध्वनिवत् स्फुटं च यथास्यात् तथा **वाचः** वाक्यानि **कूजन्ती** ध्वनन्ती। सा का इत्याकांक्षायामाह। **श्वासोच्छ्वासेति** यया कुलकुण्डलिन्या श्वासोच्छ्वासयोर्विवर्त्तनेन गमनागमनेन जगतां जगत्स्थप्राणिनां जीवः प्राणः धार्य्यते ध्रियते, संरक्ष्यत इत्यर्थः। पुनः की०, **प्रोद्दामदीप्तावली** प्रोद्दामा अत्युत्कृष्टा दीप्तावली दीप्तिश्रेणि यत्र तादृशी, अतिप्रकाशमानेत्यर्थः। **मूलाधारकर्णिकान्तर्गतस्वयम्भूलिंगोपरिवर्त्तमाना सर्पाकारसार्धत्रितयवेष्टनविशिष्टा विद्युत्विलासस्वरूपा कुलकुण्डलिनी** शक्तिस्तिष्ठतीत्यर्थः (शार्दूलविक्रीडित वृत्तम्) ॥८॥

तन्मध्यइति—तन्मध्ये कुलकुण्डलिन्या मध्ये अतिकुशला अतिशयज्ञानदानप्रवीणा **परमकला** महाप्रकृतिः। आस्ते इतिशेषः। की०, **सूक्ष्मातिसूक्ष्मा** अत्यन्तल्पाकारा **परा** श्रेष्ठा **नित्यानन्दपरम्परा** नित्यं आनन्दस्यधारा यत्र तादृशी, नित्यानन्दमयीत्यर्थः। पुनः की० **अतिचपलामालालसद्दीधितिः** अतिशयेन चपलामालावत् विद्युद्वल्लिवत् लसन्ती प्रकाशमाना दीधितिः रश्मिर्यस्यास्तादृशी। **सकलमेव** सर्व्वमेव **ब्रह्माण्डादि** भू र्भुवः स्वरित्यादि रूपं **कटाहं** वर्तुलाकारलोहपात्रविशेषम् अर्थात् सकलसृष्टिरूप कटाहमिति यावत् **यद्भासया** यस्याः परमकलाया भासया तेजसा **भासते** दीप्यते। **सेयं** सा पूर्वोक्ता इयं **श्रीपरमेश्वरी** महाप्रकृति भगवती **विजयते** विशेषेण जययुक्ता भवति। की० **नित्यप्रबोधोदया** नित्यप्रबोधस्य नित्यज्ञानस्य उदय प्रकाशो यस्यास्तादृशी। **कुण्डलिन्या मध्ये अतिसूक्ष्मस्वरूपा विद्युन्मालावत् प्रकाशमाना महाशक्तिर्विद्यते यत्कान्त्या सकलमेव ब्रह्माण्डं दीप्यत इतिभावः** (शार्दूलविक्रीडितवृत्तम्) ॥९॥

ध्यायेदिति—**मूलचक्रान्तरविवरे** आधारचक्रान्तर्गतरन्ध्रे **लसत्कोटिसूर्य्यप्रकाशां** लसन् दीप्यमानः कोटिसूर्य्याणां प्रकाशइव प्रकाशो यस्यास्तादृशी, **ताम्** प्रस्तुताम् परमकलां भगवतीं **ध्यायेत्** चिन्तयेत्। य इतिशेषः। स पुरुषः **वाचामीशः** वाक्यानां ईशः स्वामी वाक्यरचनसमर्थः बृहस्पतितुल्य इति यावत्। **नरेन्द्रः** मनुष्यश्रेष्ठः। **सहसा** झटिति **सर्वविद्याविनोदी** सर्वशास्त्र विहरणशीलश्च भवति। च पुनः **तस्य** ध्यानकर्त्तुः पुरुषस्य नित्यं सततं **निरवधि** असीम अत्यन्तमिति यावत् **आरोग्यं** रोगराहित्यं भवति। सः पुरुषः **महानन्दचिन्तान्तरात्मा**। अति प्रसन्नमनस्कः **शुद्धशीलः** स्वच्छस्वभावः अथवा निर्म्मल चरितः सन् **काव्यप्रबन्धैः** काव्यसंदर्भैः **वाक्यैः सकलसुरगुरून्** सकल देवतान् गुरूंश्च **सेवते** स्तौतीत्यर्थः (शार्दूलविक्रीडितवृत्तम्) ॥१०॥

॥ भाषाटीका ॥

अर्थात् **सुषुम्णाके** मुखसे लगाहुआ लिंगसे नीचे औ गुदासे दो अंगुल ऊपर चार दलका एक पद्म है जिसको **आधारचक्र** कहते हैं, इसके चारों दल शोण अर्थात् रक्तवर्ण हैं और अधोमुख अर्थात् नीचेमुख हैं. साधकोंको चाहिये कि प्राणायामके समय इसको ऊर्द्धमुख ध्यान करें अथवा **मूलबंध*** कर इसको ऊर्द्धमुख करलें, फिर इन चारोंदलों पर 'व' से 'स' तक चार अक्षर (व, ष, श, स,) तप्तसोनेके रंग चमकतेहुये शोभायमान होरहेहैं ॥ १ ॥

फिर इस **मूलाधारपद्मके** बीच चौकोन **पृथ्वीचक्र** शोभायमान होरहा है जो अष्टकोण आठ शूलोंसे घिराहुआ है जिसके क्रोड़ गोद में पीतवर्ण दामिनी सा दमकता हुआ अत्यन्त कोमल (लँ) पृथ्वी बीज है ॥ २ ॥

उक्तचतुष्कोण **पृथ्वीचक्रके** क्रोड़ (गोद) में प्रातःकालके नवीन सूर्य्यके समान रक्तवर्ण बालक स्वरूप सृष्टिकर्ता अर्थात **ब्रह्मा** चार भुजाओं से भूषित ऐरावत हस्ती पर सवार विराजमान होरहेहैं, जिनकी चारों भुजाओंमें चारों वेद शोभायमान और जिनके चारों मुखसे भी सामादि चारों वेद उच्चारण होरहे हैं ॥ ३ ॥

---

* देखो श्रीस्वामिहंसस्वरूपकृत प्राणायामविधि पृष्ठ ३८।

नंबर१

आधार चक्र.

अर्थात

(चतुर्दल पद्म.)

PELVIC PLEXUS.

इसचक्रका ठीकस्थान अनाटमीसे नीचे दिखलाया जाताहै

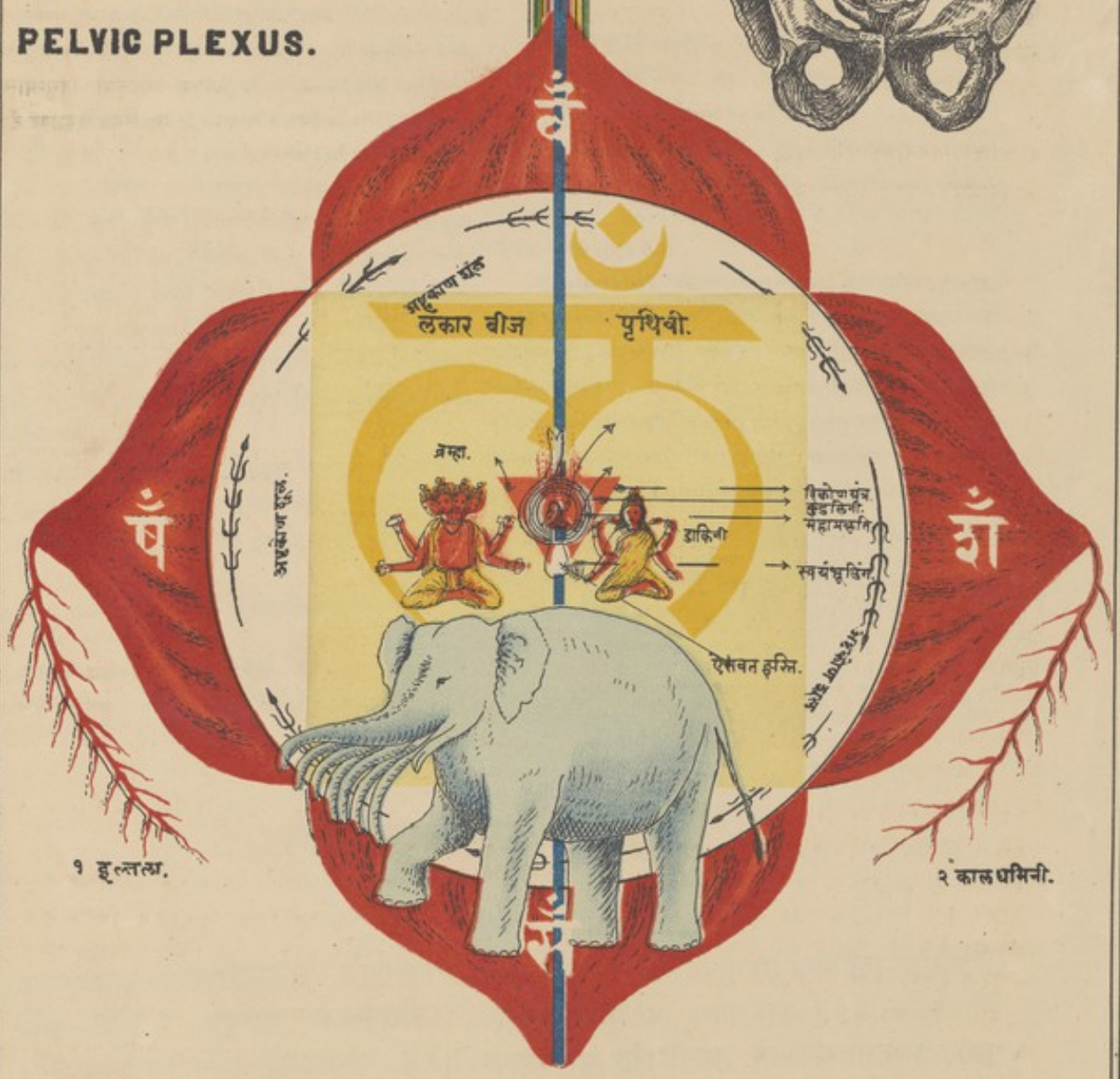

नामचक्र —	आधारचक्र.	दलोंके अक्षर—	वँ,शँ,षँ,सँ	देव —	ब्रह्मा.	व्य मबंधमे समर्थ होताहै.
स्थान —	योनि.	नामतत्व —	पृथिवी	देवशक्ति —	डाकिनी.	अंग्रेजी नाम.
दल —	चतुः	तत्वबीज —	लँ.	यंत्र —	चतुष्कोण.	PELVIC PLEXUS
वर्ण	रक्त.	बीजकावाहन —	हस्ति.	ध्यानफल— वक्तामनु ष्योंमेश्रेष्ठ,सर्व विद्याविनोदी,आरोग्य,आनंदचित्त,का-		

पुणें चित्रशाळास्टीमप्रेस.

फिर इसी चतुष्कोणचक्रके पृथ्वीबीजमें ब्रह्मा की शक्ति, डाकिनी नाम देवी अत्यन्त प्रकाशमान चारभुजाओंसे युक्त, रक्तनयना प्रलयकालके द्वादश आदित्यके समान तेज धारण किये, प्रकाशमान होरहीहै और शुद्धबुद्धि जो शिशुरूप ब्रह्मा तिनको प्रकाश देरही है अर्थात् सृष्टि रचनेकी सत्ता देरही है, क्योंकि विना शक्ति कोई देव कुछ करनेको समर्थ नहीं अथवा शुद्धबुद्धि जो योगीजन उनको ईशत्व सिद्धि प्रदान कर रही है ॥ ४ ॥

वज्रा* नामकी नाड़ीके मुखसे मिलाहुआ मूलाधारपद्मकी कर्णिकाके मध्य त्रिपुरादेवी सम्बन्धी त्रैपुराख्य नामकरके एक त्रिकोणयन्त्र अति कोमल (कामरूप) कामदेवके समान सुन्दर अथवा साधकोंके कामनाओं को पूर्णकरनेवाला, बिजलीके समान शोभायमान होरहाहै, फिर इस त्रिकोण यन्त्रके मध्यमें कन्दर्प नाम वायु प्राणियोंके प्राणकी रक्षा करनेवाला रक्तवर्ण बंधूली* पुष्पकी लालीको (अभिहसन) लज्जितकरनेवाला, कोटि सूर्य्य समान प्रकाशमान, चारों ओरसे विलास कररहाहै जो चारों ओर सम्पूर्ण शरीरमें भ्रमण करता हुआ संसारी जीवोंको अपने बशमें रखता है ॥ ५ ॥

उक्त त्रिकोनयन्त्रके मध्यमें तप्तसोनेके समान कोमल, अति कमनीय, अधोमुख, ज्ञानध्यान द्वारा जानने योग्य, नवीन पल्लवके समान सुन्दर, पूर्णचन्द्रकी किरणोंके समान प्रकाशमान, काशीमें वासकरनेवाला, विलासयुक्त, नदीजलके समान लहरें मारताहुआ, लिङ्गाकार स्वयम्भूलिङ्ग शोभायमान होरहाहै ॥ ६ ॥

उक्त स्वयम्भूलिङ्गके ऊपर मूलाधापद्मके गहरमें अत्यन्त श्रेष्ठ प्रकाश धारणकियेहुए कमलनालकी सूतसी अत्यन्त पतली, अपनी शोभासे जगतको मोहनेवाली, ब्रह्मद्वाराके मुखको अर्थात् सुषुम्णा नाड़ी के मुखको अपने मुखसे आच्छादन कियेहुए शंखके आवेष्टन ऐसी, सर्पके समान साढ़ेतीन लपेटनोंसे महाकालको लपेटतीहुई, नवीन विद्युतके समान विलास करनेवाली, निद्रिता अर्थात् शयन कियेहुए कुलकुण्डलिनी* नाम महामाया मत्तभ्रमरके झुण्ड ऐसी मधुरध्वनिसे गुंजार करतीहुई निवासकररहीहै, यह कुण्डलिनी कैसी है कि अति सुन्दर काव्यरचना की सामर्थ देनेवालीहै, औ श्वासोच्छासद्वारा अर्थात् प्राणापानके गमनागमनद्वारा जीवोंके प्राणको धारणकरतीहै ॥ ७, ८ ॥

फिर तिस कुण्डलीके मध्य, अतिकुशला अर्थात् अतिशय ज्ञानकी देनेवाली, अत्यन्त सूक्ष्मा और श्रेष्ठा, नित्यानन्द स्वरूपा, विद्युतमालाके समान रश्मियों करके प्रकाशमाना, परमकला नामकरके महाप्रकृति शोभायमान होरहीहै जिसके तेजसे सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड प्रकाशित होरहाहै, यह परमेश्वरी जय युक्तहोकर नानाप्रकारके पदार्थोंको देनेमें समर्थ हो रहीहै औ अपनी कृपाकटाक्षसे जीवोंके लिये नित्य स्वच्छ ज्ञानकी उदयकरनेवाली है ॥ ९ ॥

उक्त प्रकार वर्णन कियेहुए मूलाधारचक्रकी कर्णिकास्थित त्रिकोणयन्त्रमें कुलकुण्डलिनीके मध्य करोड़ों सूर्य्यके समान प्रकाशमाना महाप्रकृतिको जो ध्यान करताहै, वह वचन रचनामें बृहस्पतिके समान अर्थात् अत्यन्त चतुर वक्ता, मनुष्योंमें श्रेष्ठ, शीघ्र सर्व विद्याका जाननेवाला, होजाता है, औ नित्य आरोग्य रहता है और सदा महाआनन्दको प्राप्त कियेहुए शुद्धस्वभाव सहित नानाप्रकारके काव्यप्रबन्ध औ स्तुतिद्वारा बृहस्पति आदि देवताओंको प्रीतियुक्त अपने बशमें करलेता है ॥ १० ॥

ध्यान करनेवालोंको चाहिये कि कमसे कम पांच मिनटतक एक २ चक्रपर ध्यानद्वारा चित्तवृत्तिको ठहरातेहुए चतुर्दलसे सहस्रदल पर्य्यन्त आधे घंटेमें जावें, ऐसा अभ्यास करलेनेसे प्राण औ मन दोनों ऐसे निरोध होजातेहैं कि जिसका आनन्द अकथनीय है ॥

* यह नाडी सुषुम्णाके मध्य वर्तमान है जो चित्रमें अंक २ करके पीतवर्ण दिखलायागया है, पद्मके ऊपर भागमें देखलेना ।

† इसकी हिन्दी दुपहरिया, मरहटी दुपारीचेंफुल, गुजराती बपोरियो, करनाटकी बंदुरे, तैलंगी नितिमल्ली, मार्कनचेट्ट, बेगसिनचेट्ट, पंजाबी गुलदुपारिया, लैटीन (Latin) Pentapetes Phorincea,

* यह कुण्डलिनी वाग्वादिनी अर्थात् सरस्वतीरूपसे वर्त्तमान है इसीके द्वारा प्राणियोंको शब्द उच्चारण करनेकी औ चिरकाल जीवित रहनेकी शक्ति प्राप्त रहतीहै ।

अथ षड्दलपद्मवर्णनम् ।

सिन्दूरपूररुचिरारुणपद्ममन्यत्, सौषुम्णमध्य घटितं ध्वजमूलदेशे । अङ्गच्छदैः परिवृतं तडिदाभवर्णैः, वर्णैः सविन्दुलसितैश्च पुरन्दरान्तैः ॥ १ ॥ अस्यान्तरे प्रविलसद्विशदप्रकाश, मम्भोजमण्डलमथो वरुणस्यतस्य । अर्द्धेन्दुरूपलसितं शरदिन्दु शुभ्रं, वँकारबीज ममलं मकराधिरूढम् ॥ २ ॥ तस्याङ्कदेशकलितो हरिरेव पाया, न्नीलप्रकाशरुचिरश्रियमादधानः । पीताम्बरः प्रथमयौवनगर्व्वधारी, श्रीवत्सकौस्तुभधरो धृतवेदवाहुः ॥ ३ ॥ अत्रैवभाति सततं खलु राकिनी सा, नीलाम्बुजोदरसहोदरकान्तिशोभा । नानायुधोद्यतकरै र्लसिताङ्गलक्ष्मी, र्दिव्याम्बराभरणभूषितमत्तचिन्ता ॥ ४ ॥ स्वाधिष्ठानाख्यमेतत्सरसिज ममलं चिन्तयेद्योमनुष्य, स्तस्याहंकारदोषादिकसकलरिपुः क्षीयते तत्क्षणेन ।

योगीशः सोपि मोहाद्भुततिमिरचयो भानुतुल्यप्रकाशो गद्यैः पद्यैः प्रबन्धैर्विरचयति सुधाकाव्यसन्दोह लक्ष्मीम् ॥ ५॥

॥ भाष्यम् ॥

सिन्दूरेति—सिन्दूरपूरेति सिंदूरस्यपूरः राशिस्तद्वत् रुचिरं सुन्दरम् अरुणं रक्तवर्णं च तत् पद्मं स्वाधिष्ठाननामकं कमलम् अन्यत् भिन्नम् । मूलाधारकमलादितिशेषः । कीदृशं, ध्वजमूलदेशे लिङ्गमूल प्रदेशे सौपुम्णमध्यघटितं सुषुम्णाया नाड्या मध्येघटितं ग्रथितम् । पुनः की०, अङ्गच्छदैः षट्पत्रैः परिवृत्तं वेष्टितं षट्पत्रैर्युक्तमित्यर्थः। कीदृशै रङ्गच्छदैः तडिदाभवर्णैं विद्युत् समकान्तिभिरक्षरैर्युक्तैरितिशेषः । की०, तडिदाभवर्णैः वाद्यैः व एव आद्यो येषां तैः । पुनः की०, पुरन्दरान्तैः पुरन्दरो लकारएव अन्तो येषां तादृशैः व, भ, म, य, र, लैरित्यर्थः । पुनः की०, सविन्दुलसितैः सविन्दवः विन्दुयुक्ता; अतएव लसिता शोभिताश्च तादृशैः ॥ अकारानुस्वारविशिष्ट व भ म य र लेति षड्वर्णाङ्कितषट्पत्रवेष्टितं लिङ्गमूलदेशस्थं सिन्दूरवर्णकं स्वाधिष्ठानसंज्ञकं पद्मं मूलाधारपद्मादतिरिक्तमस्तीतिभावार्थः। (वसन्ततिलका वृ० । तल्लक्षणम् । उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौग इति) ॥१॥

अस्येति—अस्यान्तरे अस्य स्वाधिष्ठानपद्मस्य अन्तरे मध्ये वरुणस्य जलाधिष्ठातृदेवस्य अम्भोजमण्डलं जलजचक्रं वर्तत इतिशेषः। की० अम्भोजमण्डलं प्राविलसद्विशदप्रकाशं प्रकर्षेण विलसन् विशदो निर्म्मलः प्रकाशो यस्यतादृशं शुक्लवर्णमित्यर्थः। अथो पुनः तस्य चक्रस्य सम्बन्धि वरुणस्य जलाधिष्ठातृदेवस्य वैंकारबीजमपिवर्त्तते । बीजं की०, अर्द्धेन्दुरूपलासितं अर्द्धचन्द्राकारेण शोभितम् । पुनः की०, शरदिन्दु शुभ्रं शरत्कालीनो य इन्दुश्चन्द्रस्तद्वत् शुभ्रं शुक्लवर्णमित्यर्थः । पुनः की०, अमलं निर्म्मलं, मकराधिरूढं मकरारूढं मकरवाहनमित्यर्थः । वरुणस्य मकरवाहनत्वेन तद्बीजस्यापि मकरवाहनत्वमिति सिद्धम् ॥ स्वाधिष्ठानचक्रस्यान्तर्वरुणस्य जलजचक्रं वर्त्तते अस्यैवचक्रस्य मध्ये शरत्कालीनचन्द्रविशदं मकरारूढं वँ बीजमपि विद्यत इतिभावः (वसन्ततिलका वृ०) ॥२॥

तस्येति—तस्य वंकारबीजस्य अङ्कदेशकलितः क्रोड़देशस्थितः हरिरेवपायात् हरिः विष्णुः एव निश्चयेन पायात् युष्मान् रक्षतु। हरिः की०, नीलप्रकाशरुचिरश्रियं नीलप्रकाशेन नीलवर्णकान्त्या रुचिरा मनोज्ञा या श्रीः शोभा तां आदधानः धारयन्सन् नीलवर्ण इति यावत् । पुनः की०, पीताम्बरः पीतवर्णं अम्बरं वस्त्रं यस्यतादृशः धृतपीतवस्त्र इत्यर्थः । पुनः की०, प्रथमयौवनगर्व्वधारी प्रथमं नवीनं यद्यौवनं तस्मात् यो गर्व्वः दर्पः तद्धारी नवयौवनजन्याहंकारयुक्त इत्यर्थः । पुनः की०, श्रीवत्सकौस्तुभधरः श्रीवत्सचिन्हविशेषः कौस्तुभो मणिविशेषः तयोःधरः । पुनः की०, धृतवेदबाहुः धृतावेदाः चतुः संख्यका बाहवोयेन तादृशः चतुर्भुजइत्यर्थः ॥ स्वाधिष्ठानपद्मस्य वंकारबीजे नीलवर्णो नवयौवनान्वितश्चतुर्भुजो हरिरास्त इतिभावः (वसन्ततिलका वृ०) ॥३॥

अत्रेवेति—अत्रैव वंकारबीजक्रोड़देश एव सा प्रसिद्धा राकिनीनाम्नी शक्तिः खलु इति निश्चयेन सततं निरन्तरं भाति दीप्यते। कीदृशी, नीलाम्बुजेति नीलाम्बुजस्य नीलपद्मस्य उदरमन्तःस्थानं तस्य सहोदरा तत्सदृशी याकान्तिः आभा तया शोभा यस्यास्तादृशी, नीलवर्णेत्यर्थः । पुनः की०, नानेति नाना विविधाः आयुधाः अस्त्राणि येषु तैः उद्यतकरैः उत्थितहस्तैः प्रकाशिताङ्गलक्ष्मीः दीप्तशरीरशोभायस्यास्तादृशी। पुनः की०, दिव्येति दिव्यानि मनोज्ञानि यानिअम्बराति वस्त्राणि आभरणानि भूषणानिच तैर्भूषिता अलंकृता साचासौ मत्तचित्ता मत्तं हर्षविशिष्टं चित्तं यस्याः, हृष्टमना इत्यर्थः ॥ अस्मिन्नेव वँकारबीजे नीलवर्णा चतुर्भुजा राकिनी शक्तिरास्त इतिभावार्थः (वसन्ततिलका वृ०) ॥४॥

स्वाधिष्ठानाख्यमिति—"स्वाधिष्ठानपद्मस्य चिन्तनस्यफलमाह" योमनुष्यः यः पुरुषः स्वाधिष्ठानाख्यं स्वाधिष्ठाननामकम् अमलं निर्म्मलं एतत् इदं सरसिजं पद्मं चिन्तयेत् ध्यायेत् तस्यमनुष्यस्य अहंकारेति अहांकारदोषः आदिर्यस्यतादृशः यः सकलरिपुः अरिषड्वर्गः तत्क्षणेन तत्कालेन तस्मिन्नेवसमय इत्यर्थः क्षीयते स्वयमेव नश्यति । सोपि सः पुरुषोपि योगीशो योगिश्रेष्ठः भवतीतिशेषः । अपि पुनः मोहाद्भुततिमिरचयः मोहोऽज्ञानमेव अद्भुततिमिरचयः अतीवविचित्रान्धकारराशिः तत्र भानुतुल्यप्रकाशः भानुतुल्यः सूर्य्यसदृशः प्राकाशो ज्योतिर्यस्यतादृशः सन् गद्यैः पद्यैः प्रबन्धैः गद्यपद्यसंदर्भैः सुधाकाव्यसन्दोहलक्ष्मीम् अमृतमयकाव्यसमूहशोभां विरचयति निबध्नाति (स्रग्धरा वृ०) ॥५॥

॥ भाषाटीका ॥

सुषुम्णा नाड़ीके मध्य जो **चित्रिणी** उससे ग्रथित, **चतुर्दलपद्मसे** ऊपर ध्वज अर्थात् लिङ्गके मूलमें एक दूसरा पद्म छौदलका है जिसको **स्वाधिष्ठानचक्र** कहते हैं, यह पद्म सुन्दर कोमल सिंदूरके रंग ऐसा गुलाबी रंगसे सुशोभित है, इसके छवों दलोंपर विद्युतके समान निर्म्मल दमकतेहुए (**व**) से लेकर (**ल**) तक छवों अक्षर अर्थात् **वँ, शँ, षँ, यँ, रँ, लँ,** अकार और बिन्दुके सहित अर्थात् अनुस्वारयुक्त शोभायमान होरहेहैं ॥१॥

उक्त **स्वाधिष्ठानचक्र** के मध्य स्वच्छ निर्म्मल शुक्लवर्ण अम्भोज अर्थात् चन्द्रमण्डलाकार **वरुणचक्र** है, इस वरुणचक्र सम्बन्धी शरदऋतु के चन्द्रमा समान शुक्लवर्ण, निर्म्मल (**वँ**) वरुणबीज, मस्तकपर अर्धचन्द्र धारण कियेहुए, मकरपर आरूढ़ है अर्थात् वरुणका वाहन मकर है इस कारण उसके बीजका भी वाहन मकरही है ॥२॥

तिस वँकार वरुणबीजके क्रोड़ अर्थात् गोदमें श्री **विष्णु भगवान्** चतुर्भुज, नील प्रकाशसे प्रकाशित अर्थात् स्यामवर्ण शरीर, अत्यन्त सुन्दर, युवा अवस्थासे गर्वित, पीतवस्त्र पहने, हृदयमें श्रीवत्स और कौस्तुभमणि धारण किये, शोभायमान होरहे हैं, ऐसे विष्णु भगवान् सदा आपलोगोंकी रक्षाकरें ॥४॥

इसी स्थानमें उक्त विष्णु भगवान्के वामभागस्थित निश्चय करके **राकिनी** नाम देवी अर्थात् लक्ष्मी नीले कमलकी कान्ति समान स्यामा नानाप्रकारके श्रेष्ठ शस्त्रोंको चारों भुजाओंमें धारण किये विद्युत समान

नंबर २.

स्वाधिष्ठानचक्र.

अर्थात

(षट्‌दल पद्म.)

HYPOGASTRIC PLEXUS.

नामचक्र —	स्वाधिष्ठान.	दलोंकेअक्षर —	बँ, से लँ तक.	देव —	विष्णु	गद्यपद्यके रचनामें समर्थ होताहै.
स्थान —	पेडू.	नामतत्व —	जल.	देवशक्ति —	राकिनी.	अंग्रेजीनाम.
दल —	षट्.	तत्वबीज —	वँ.	यंत्र —	चंद्राकार.	HYPOGASTRIC PLEXUS
वर्ण —	सिंदूर.	बीजकावाहन —	मकर.	ध्यानफल —	अहंकारादि विकार. नाश, योगियोंमें श्रेष्ठ, मोह रहित औ	

पुणें चित्रशाळा स्टीमप्रेस.

नंबर ३

मणिपूरकचक्र

(अर्थात)

दशदलपद्म

EPIGASTRIC PLEXUS

नामचक्र - मणिपूरक.	दलोंकेअक्षर - डँ से फँ तक	देव — वृद्ध रुद्र.	ध्यान फल
स्थान - नाभि.	नाम तत्व - अग्नि.	देव शक्ति - लाकिनी.	संहार पालनमें समर्थ और वचन रचनामें चतुर होजाता है. और उसके जिव्हापर सरस्वती निवास करती है
दल - दश.	तत्वबीज - रँ.	यंत्र - त्रिकोण	अँग्रेजीनाम उन नाड़ीयोंके समूहका जो इनचक्रोंसे संबंध रखताहै EPIGASTRIC PLEXUS.
वर्ण - नील.	बीजका वाहन - मेष.		

नानाप्रकारके दिव्य वस्त्र औ आभूषणोंसे सुशोभित, मत्तचित्त अर्थात अत्यन्त आनन्दचित्त औ प्रसन्न वदन, शोभायमान होरही है ॥४॥

जो साधक उक्त प्रकार षट्दलकमल को नित्य ध्यानकरताहै उसके अहंकारादि षड्रिपु उसीक्षण आपसे आप नाश होजाते हैं, और वह योगियोंमें श्रेष्ठ और अज्ञानतारूप विचित्रमोहांधकारके नाशकरनेमें सूर्य्य समान तेजस्वी होकर गद्यपद्यमें निपुण हो बहुत मीठे २ काव्योंकी रचना में प्रवीण होजाता है ॥५॥ इति ॥

अथ दशदलपद्मवर्णनम् ।

तस्योर्ध्वे नाभिमूले दशदललसिते पूर्णमेघप्रकाशे, नीलाम्भोजप्रकाशैरुपकृतजठरे डादिफान्तैः सचन्द्रैः । ध्यायेद्वैश्वानरस्यारुणमिहिरसमं मण्डलं तत्त्रिकोणं, तद्बाह्ये स्वस्तिकाख्यैस्त्रिभिरभिलसितं तत्रवन्हेः स्ववीजम् ॥१॥ ध्यायेन्मेषाधिरूढं नवतपननिभं वेदवाहुज्ज्वालाङ्गं, तत्क्रोडे रुद्रदेवो निवसति सततं शुद्धसिंदूररागः । भस्मालिप्ताङ्गभूषाभरलसितवपु र्वृद्धरूपी त्रिनेत्रः, लोकानामिष्टदाता भयलसितकरः सृष्टिसंहारकारी ॥२॥ अत्रास्ते लाकिनीसा सकलशुभकरी वेदवाहूज्ज्वलाङ्गी, श्यामा पीताम्बराद्यैर्विविधविरचनालंकृता मत्तचित्ता। ध्यात्वैवं नाभिपद्मं प्रभवति सुतरां संहृतौ पालनेवा, वाणीतस्याननाब्जेविलसतिसततं ज्ञानसन्दोहलक्ष्मीः ॥३॥

॥ भाष्यम् ॥

तस्येति—तस्य स्वाधिष्ठानपद्मस्य ऊर्ध्वे उपरिदेशे **नीलाम्भोजे** मणिपूरकाख्यपद्मे **वैश्वानरस्य** अग्नेः **तत्त्रिकोणं** तत् प्रसिद्धं त्रिकोणं त्रिकोणाकारं **मण्डलं** चक्रं **ध्यायेत्** चिन्तयेत् । कीदृशे नीलाम्भोजे **नाभीमूले** टूंडीमूलभूते । पुनः की०, **दशदललसिते** दशपत्रविशिष्टे । पुनः की०, **पूर्णमेघप्रकाशे** पूर्णमेघवत् सजलवारिदस्येव प्रकाशो दीप्तिर्यस्यतादृशे । पुनः की०, **प्रकाशैः** प्रकाशवद्भिः शुभ्रैरितियावत्, **सचन्द्रैः** चन्द्रविन्दुसहितैः **डादिफान्तैः** डकारादिफकारान्तवर्णैः ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, इत्येतैर्दशभिर्वर्णैः **उपकृतजठरे** अलंकृतोदरे । पुनः की०, त्रिकोणमण्डलम् **अरुणमिहिरसमम्** अरुणोरक्तवर्णः सचासौ मिहिरः सूर्य्यः इति अरुणमिहिर स्तस्यसमम् समानम्, प्रातःकालीनबालसूर्य्यसदृशरक्तवर्णमित्यर्थः । **तद्बाह्ये** तस्य त्रिकोणस्य बाह्ये बहिर्देशे **त्रिभिः** त्रिसंख्यकैः **स्वस्तिकाख्यैः** स्वस्तिकसंज्ञकैर्द्वारैरितिशेषः । **अभिलसितं** सुशोभितं, बहिर्देशस्थितद्वारत्रययुक्तं त्रिकोणमित्यर्थः । **तत्र** त्रिकोणमध्ये **वन्हेः** अनलस्य **स्ववीजं** निजवीजं [रँ] **ध्यायेत्** स्मरेत् "परश्लोकेनसहान्वयः" ॥ स्वाधिष्ठानपद्मोपरिदेशस्थित डकारादिफकारान्तवर्ण युक्तमणिपूरकसंज्ञके नीलाम्भोजेरक्तवर्ण त्रिकोणं वर्तते तस्य बाह्यदेशस्थितत्रिसंख्यकस्वस्तिकाख्यैर्द्वारैर्युक्तं त्रिकोणमण्डलान्तर्गतं वह्निवीजं ध्यायेदितिभावार्थः [सग्धरा वृ०] ॥१॥

ध्यायेदिति—"वह्नेः स्ववीजं कीदृशमित्याह । **मेषाधिरूढं** मेढ्वाहन मेडकासीनमित्यर्थः । पुनः की०, **नवतपननिभं** नवोनवीनो यस्तपनः प्रातःकालीनसूर्य्यस्तन्निभं तादृशं प्रातःकालीनसूर्य्यतुल्यमित्यर्थः । पुनः की०, **वेदवाहूज्ज्वलाङ्गं** वेदाश्चतुःसंख्यका वाहवोयस्यतत् वेदवाहु उज्ज्वलानि गौरानि अङ्गानि अवयवा यस्यतत् उज्ज्वालाङ्गम् वेदवाहुचतत् उज्ज्वलाङ्गम् ता० अत्रकर्म्मधारयसमासः। **तत्क्रोडे** तस्य रँ बीजस्यक्रोडे अङ्कदेशे **रुद्रदेवः** महादेवः **सततं** निरन्तरं निवसति तिष्ठति। पुनः की०, **शुद्धसिंदूररागः** शुद्धं निर्म्मलं यत्सिन्दूरं तस्येवरागो लौहित्यं यस्य ता० उत्तमसिन्दूरतुल्यरक्तवर्ण इत्यर्थः । पुनः की०, **भस्मेति** भस्मालिप्तं विभूतिभिरासमन्ताद्भावेन युक्तं यदङ्गं तस्य या भूषा अलंकरणं तस्या भरः अतिशय आधिक्यमितियावत् तेनलसितं शोभितं वपुः शरीरं यस्य ता० । पुनः की०, **वृद्धरूपी** वृद्धाकारः स्थविर इत्यर्थः । पुनः की०, **त्रिनेत्रः** त्र्यम्बकः । पुनः की०, **लोकानामिष्टदाता** लोकानां जनानामिष्टदाता अभिलषितप्रदः । पुनः की०, **अभयलसितकरः** अभयेन लसितः शोभितःकरोयस्य तादृशो मुक्तिप्रद इत्यर्थः । पुनः की०, **सृष्टिसंहारकारी** सृष्टिसंहारौ करोत्येवंशील उद्भवप्रलयकर इत्यर्थः ॥ **मेषारूढस्य प्रातःकालीनसूर्य्यसमरक्तवर्णस्य चतुर्भुजस्य रँ बीजस्य क्रोडे सिंदूरवर्णो भस्मितसर्वाङ्गः स्थविरो जनाभिलषितप्रदः सृष्टिसंहारकरस्त्रयम्बको रुद्रदेवो निवसतीति भावार्थः** [सग्धरा वृ०] ॥२॥

अत्रेति—अत्र त्रिकोणान्तर्गत (रँ) बीजे **सा** प्रसिद्धा **लाकिनी** शक्तिरास्ते । कीदृशी **सकलशुभकरी** सर्वमंगलदायिका । पुनः की०, **वेदवाहुज्ज्वलाङ्गी** वेदैश्चतुर्भिर्बाहुभिरुज्ज्वलानि अङ्गानियस्यास्तादृशी, चतुर्भुजेत्यर्थः । पुनः की०, **श्यामा** सुवर्णवर्णा "तप्तकांचनवर्णाभा साश्यामा परिकीर्तिता" । पुनः की०, **पीताम्बराद्यैः** पीतवर्णवस्त्रादिभिर्या **विविधविरचनालंकृता** विविधरचना नानाप्रकारवेषविन्यासः तया अलंकृता भूषिता । पुनः की०, **मत्तचित्ता** मत्तं हर्षयुक्तं चित्तं यस्यास्तादृशी ॥ **रँ बीजे चतुर्भुजा तप्तकांचनवर्णाभा पीताम्बरा लाकिनी शक्तिश्चवर्तत इतिभावार्थः । ध्यात्वैवं नाभिपद्मम्** एतन्नाभिपद्मं मणिपूराख्यकं पद्मं ध्यात्वा चिन्तयित्वा **संहृतौ पालनेवा** जगत्संहारकरणे रक्षणेच **सुतरां प्रभवति** सम्यक् प्रकारेण समर्थोभवति साधक इत्यर्थः । **तस्याननाब्जे** साधकस्य मुखपद्मे **वाणी** सरस्वती **सततं** निरन्तरं **विल-**

सति विलासं कराति। वाणी की०, ज्ञानसन्दोहलक्ष्मीः ज्ञानसमूहस्य लक्ष्मीः शोभा। तज्जनिका इत्यर्थः [स्रग्धरा वृ०] ॥३॥

॥ भाषाटीका ॥

उक्त स्वाधिष्ठान चक्रसे ऊपर नाभीके मूलमें पूर्णमेघके समान नीलवर्ण प्रकाशित दशदलका कमलहै जिसको मणिपूरकपद्म कहतेहैं और इसकी दशों पत्तियों पर (ड) से (क) तक दशअक्षर अर्थात् डँ, ढँ, णँ, तँ, थँ, दँ, धँ, नँ, पँ, फँ, चन्द्र औ विन्दुके सहित शोभायमान होरहेहैं, इन दसों दलोंसे जठर अर्थात् पेट अलंकृतहै, इस चक्रके मध्यमें वैश्वानर देवताका त्रिकोनमंडल बालसूर्य्यके समान लालवर्ण ध्यान करना चाहिये, इस त्रिकोणयन्त्रके बाहर स्वस्तिक नाम करके तीनद्वार लगेहैं, फिर इसी त्रिकोणयन्त्रके बीच वह्निदेवताका (रँ) बीज भी प्रातःकालीन बालसूर्य्यके समान लालवर्ण दमकताहुआ ध्यानकरनाचाहिये ॥ १ ॥

फिर यह रँ बीज अति स्वच्छस्वरूप चारभुजा धारणकिये शोभायमान होरहाहै, जिसके क्रोड़ (गोद) में सिंदूरके समान लोहितवर्ण, वृद्धरूपी त्रिनेत्र, भस्मभूषित अङ्ग, नाना प्रकार अलंकारयुक्त, एकहस्तसे संसार निवासियोंको वांछितफल देतेहुए और दूसरे हस्तसे अभयदान करतेहुए, सृष्टि, संहारमें समर्थ रुद्ररूप शिव निवासकररहे हैं, एवम् प्रकार ध्यानकरनाचाहिये ॥ २ ॥

उक्त शिवके समीप लाकिनी नाम्नी देवी सर्वप्रकार मंगलकी कर नेवाली, चतुर्भुजी, निर्म्मल अङ्ग, अति प्रकाशमान, श्यामा अर्थात् स्वर्णवर्ण पीताम्बर धारणकिये, विविध प्रकारके भूषणोंसे भूषित, आन्दसे मत्तचित्त अर्थात् प्रसन्नचित्त, वर्त्तमान होरहीहै। अब आधे श्लोक करके इस पद्म का ध्यानफल कहतेहैं। अर्थात् जो साधक उक्त प्रकार दशदल पद्मके मध्य वैश्वानर देवताके त्रिकोणमंडल स्थित (रँ) वह्निबीजके क्रोड़ (गोद)में रुद्र रूप शिवको लाकिनी नाम देवीके सहित ध्यानकरताहै, वह भी संहार पालनमें समर्थ होजाताहै औ ज्ञान प्रकाशकरनेवाली बानी उसके मुख-कमलमें विलासकरती है ॥ ३ ॥इति॥

अथ द्वादशदलपद्मवर्णनम् ।

तस्योर्ध्वे हृदिपङ्कजं सुललितं वन्धूककान्त्युज्ज्वलं, कार्यैः द्वादशवर्णकैरुपहृतं सिन्दूररागान्वितैः। नाम्नानाहतसंज्ञकं सुरतरुं वाञ्छातिरिक्तप्रदं, वायोर्मण्डलमत्र धूमसदृशं षट्कोण शोभान्वितम् ॥१॥ तन्मध्ये पवनाक्षरंच मधुरं धूमावलीधूसरं ध्यायेत्पाणिचतुष्टयेन लसितं कृष्णाधिरूढं परं। तन्मध्ये करुणानिधान ममलं हंसाभमीशाभिधं, पाणिभ्यामभयं वरञ्च ददतं लोकत्रयाणामपि ॥२॥ अत्रास्ते खलु काकिनी नवतडित्पीता त्रिनेत्रा शुभा, सर्व्वालंकरणान्विता हितकरी योगान्वितानां मुदा। हस्तैः पाशकपालशोभनवरान् संविभ्रती चाभयं, मत्ता पूर्णसुधारसार्द्रहृदया कङ्कालमालाधरा ॥३॥ एतन्नीरजकर्णिकान्तरलसच्छक्तिस्त्रिकोणाभिधा, विद्युत्कोटिसमानकोमलवपुः सास्ते तदन्तर्गता। वाणाख्यः शिवलिंगकोऽपि कनकाकारांगरागोज्ज्वलः, मौलौ सूक्ष्मविभेदयुङ्मणिरिव प्रोल्लासलक्ष्म्यालयः ॥४॥ ध्यायेद्यो हृदिपंकजं सुरतरुं शर्व्वस्यपीठालयं, देवस्यानिलहीनदीपकलिका हंसेनसंशोभितम्। भानोर्मण्डलमण्डितान्तरलसत् किञ्जल्कशोभाधरं, वाचामीश्वरईश्वरोपि जगतीरक्षाविनाशक्षमः ॥५॥ योगीशोभवति प्रियात्प्रियतमः कान्ताकुलस्यानिशं, ज्ञानीशोऽपि कृती जितेन्द्रियगणोध्यानावधाने क्षमः। गद्यैः पद्यपदादिभिश्च सततं काव्याम्बुधारावहः लक्ष्मीरञ्जनदैवतं परपुरे शक्तःप्रवेष्टुं क्षणात् ॥६॥

॥ भाष्यम् ॥

तस्येति—तस्य नाभिपद्मस्य ऊर्ध्वे उपरिदेशे हृदि हृदयमध्ये नाम्नानाहतसंज्ञकम् संज्ञया अनाहताख्यं पङ्कजं पद्मं चिन्तयेदितिशेषः। कीदृशं, सुललितं मनोहरं, वंधूककान्त्युज्ज्वलं बंधूकं माध्याह्निकपुष्पं तस्य याकान्तिस्तद्वदुज्ज्वलं बंधूकपुष्पमिवरक्तवर्णमित्यर्थः। पुनः की०, कार्यैः ककारादि ठकारान्तैः क, ख, ग, घ, ङ. च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, इत्येतै र्द्वादशवर्णकैरुपहृतं द्वादशसंख्यकैरेतैरक्षरैर्युक्तम्, कीदृशै र्द्वादश वर्णकैः, सिन्दूररागान्वितैः सिन्दूरस्ययोरागः रक्तिमा तेनान्वितैर्युक्तैः, सिन्दूरसदृशरक्तवर्णैरित्यर्थः। पुनः की०, सुरतरुं कल्पवृक्षं तत्सदृशमित्यर्थः "देववृक्षो भक्तजनमनोभिलषितमेव ददाति तस्मादप्यस्याधिकदातृत्वबोधनाय विशेषणमाह" वाञ्छातिरिक्तप्रदम् वाञ्छाया अतिरिक्तमधिकं प्रददाति वितरतीति वाञ्छातिरिक्तप्रदम्। वाञ्छायायदधिकं तदपि ददातीत्यर्थः। यद्वा वाञ्छाया अतिरिक्तं अधिकम्। यस्मादधिकं वाञ्छितं नास्ति मोक्षमितियावत् तत्प्रदम् मुक्तिप्रदमित्यर्थः। अत्र अस्मिन् अनाहत पद्मे षट्कोणशोभान्वितं षट्कोणाकारं वायोर्मण्डलं मरुच्चक्रं चिन्तयेदितिशेषः। मण्डलं की० धूमसदृशं धूमवर्णम् ॥ दशदलपद्मोपरि हृदेशस्थस्य वंधूकपुष्पतुल्य रक्तवर्णस्य सिंदूरवर्णककारादि ठान्त-

नंबर ४
अनाहतचक्र
(अर्थात्)
द्वादश दल पद्म
CARDIAC PLEXUS

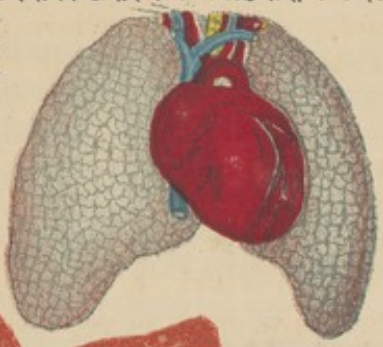

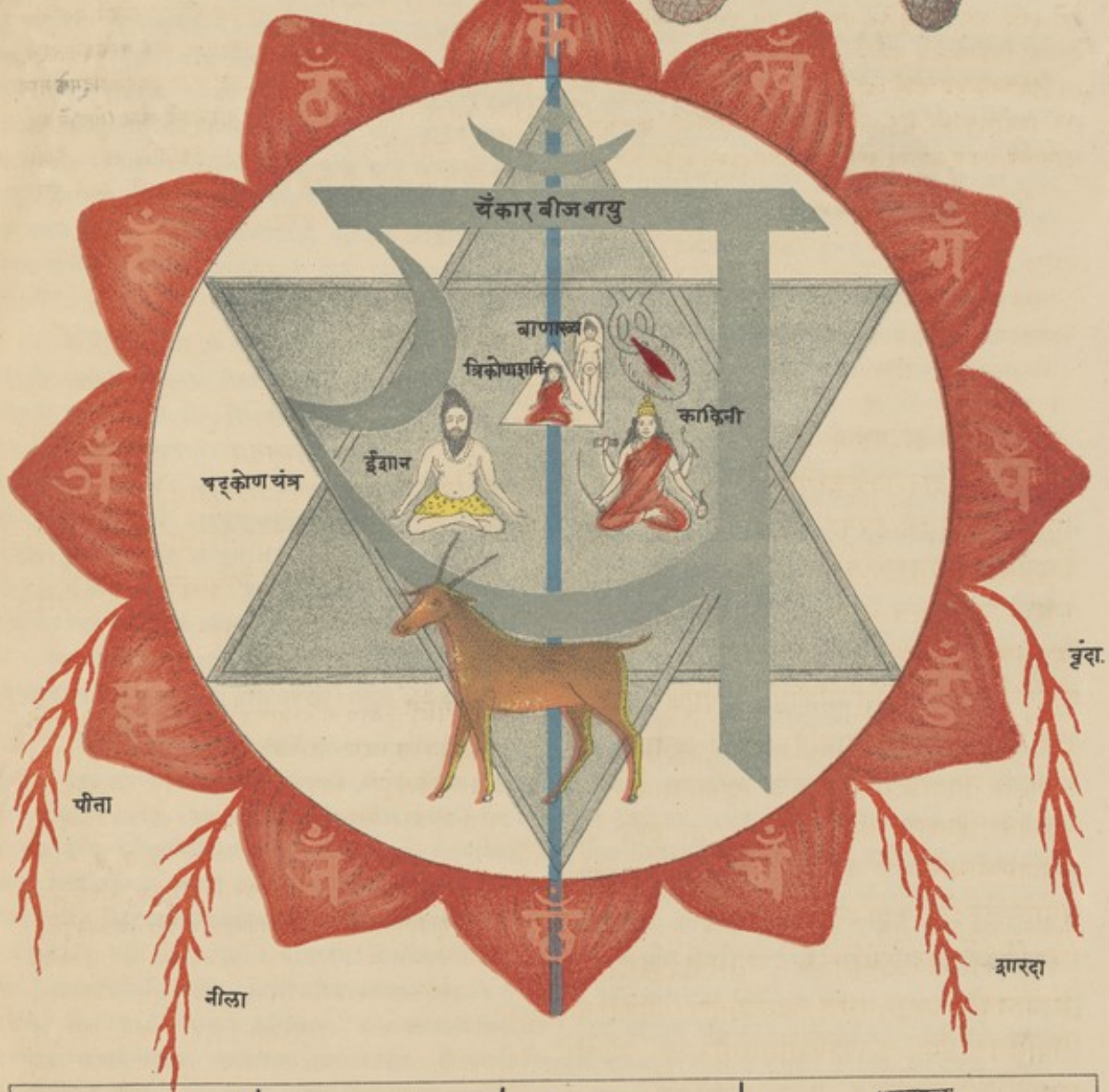

नामचक्र – अनाहत. स्थान – हृदयम्. दल – द्वादश. वर्ण – अरुण.	दलोंके अक्षर – कँसेठतक. नाम तत्व – वायु. तत्वबीज – यँ. बीजका वाहन – मृग.	देव – ईशान. देव शक्ति – काकिनी. यंत्र – षट्कोण.	ध्यानफल वचन रचनामे समर्थ. ईशत्व सिद्धि प्राप्त. योगीश्वरज्ञानवान इंद्रिय जित. काव्य शक्तिवाला होताहै. और परकाया प्रवेश करनेको समर्थहोताहै. अँग्रेजी नाम उन नाडियोंके समूहका जो इनचक्रोंसे संबंध रखताहै. CARDIAC PLEXUS

द्वादशाक्षरविशिष्टद्वादशपत्रयुक्तस्य अनाहतपद्मस्यमध्ये षट्कोणाकारं धूम्रवर्णं वायुमण्डलं वर्तत इतिभावः (शार्दूल विक्रीडित वृ०)।१।

तन्मध्यइति—तन्मध्ये तस्य वायुमण्डलस्यमध्येऽन्तः **पवनाक्षरम्** (यँ) बीजंध्यायेत। कीदृशम् **मधुरम्** माधुर्य्यविशिष्टं। पुनः की०, **धूमावलीधूसरम्** धूमावली धूमपंक्तिस्तद्वद् धूसरम् ईषत्पाण्डुवर्णम् धूमसमूहसदृशाल्पश्वेतपीतमिश्रितश्यामवर्णमित्यर्थः। पुनः की०, **पाणिचतुष्टयेनलसितं** चतुःसंख्यकहस्तेनयुक्तं **चतुर्भुजमित्यर्थः**। पुनः की०, **कृष्णाधिरूढं** कृष्णसारवाहनम्। अत्रापि बीजस्य हस्तवत्ता वाहनवत्ताच पूर्ववदुन्नेया। पुनः की०, **परम्** श्रेष्ठम्। **तन्मध्ये** तस्य यँ रूप वायुबीजस्य मध्ये **करुणानिधानम्** करुणामयम् **अमलं** निर्म्मलं **हंसाभं** शुक्लवर्णम् **इशाभिधम्** ईशाननामानं शिवं चिन्तयेदितिशेषः। पुनः की०, **लोकत्रयाणामपि** स्वर्गमर्त्यपातालस्थजनानामपि **अभयं** मुक्तिं **वरम्** लोकानामिष्टंच ददतं वितरन्तम् ॥ **वायुमण्डलस्यचमध्ये धूम्रवर्णं चतुर्हस्तं कृष्णमृगवाहनं यँ बीजं ध्यायेत् तन्मध्येऽपि शुक्लवर्णं लोकानामभयं वरञ्च पाणिभ्याम्ददतम् ईशाननामानं शिवं चिन्तयेत्** (शार्दूल वि० वृ०) ॥२॥

अत्रेति—अत्र यँ बीजे ईशाननामशिवसन्निधौ वा खलु निश्चयेन **काकिनी** शक्तिरास्ते तिष्ठति। की०, **नवतड़ित्पीता** निर्म्मल विद्युदिव पीतवर्णा। पुनः की०, **त्रिनेत्रा त्र्यम्बका शुभा** मङ्गलदायिका। पुनः की०, **सर्व्वालङ्करणान्विता** समस्तभूषणयुक्ता। पुनः की०, योगान्वितानां योगाभ्यासिनां मुदा हर्षेण हितकरी कल्याणकारिणी। पुनः की०, **हस्तैः** चतुर्भिःकरैः **पाशकपालशोभनवरान् पाशः** शस्त्रविशेषः **कपालः** मुण्डः **शोभनवरः** शुभेष्टम् **अभयंच** मुक्तिंच **संविभ्रती** संधारयन्ती। पुनः की०, **मत्ता** हृष्टा। पुनः की, **पूर्णसुधारसार्द्रहृदया** पूर्णेन सुधारसेन आर्द्रं सिक्तं हृदयं यस्यास्तादृशी। अमृतमयहृदयेत्यर्थः। पुनः की०, **कङ्कालमालाधरा** अस्थिस्रग्धारिणी ॥ **अत्रयँबीजे चतुर्हस्ता विद्युदाकारा त्रिनेत्रा काकिनी शक्तिश्चवर्तते** (शार्दूल वि० वृ०) ॥३॥

एतदिति—**एतन्नीरजकर्णिकान्तरलसत्शक्तिः** एतन्नी रजस्य अनाहतपद्मस्य कर्णिकान्तरे बीजकोषमध्ये लसन्ती दीप्यमाना काचित् शक्तिरास्त इतिशेषः। कीदृशी **त्रिकोणाभिधा** त्रिकोणाख्या। अनाहतपद्मकर्णिकामध्ये त्रिकोणाभिधेया शक्ति र्वतत इत्यर्थः। **तदन्तर्गता** तस्याः त्रिकोणाभिधायाः शक्त्या अन्तर्गता मध्यस्थिता **सा** प्रसिद्धा शक्ति **रास्ते**। की० **विद्युत्कोटिसमानकोमलवपुः** चपलाशतसहस्रसदृशं कोमलं सुन्दरंवपुः शरीरं यस्यास्तादृशी। **बाणाख्यः** शिवलिङ्गकोपि बाणनामा लिङ्गाकारशिवोऽपि आस्ते। न केवला प्रसिद्धाशक्तिस्तदन्तर्गता किन्तु बाणाख्यः शिवलिङ्गकोपि तदन्तर्गत इतिपरमार्थः। की० बाणनामा शिवः **कनकाकाराङ्गरागोज्ज्वलः** कनकाकारः स्वर्णवर्णसदृशः योऽङ्गरागः कुमकुमादिस्तेन उज्ज्वलो दीप्तिविशिष्टः। यस्य **मौलौ** मस्तके **सूक्ष्मविभेदयुक्** सूक्ष्मरन्ध्र सम्बन्धीप्रोल्लास **लक्ष्म्यालयः** प्रकर्षेण उल्लासविशिष्टा यालक्ष्मीः विष्णुशक्तिः तस्या आलयः स्थानं अष्टदलपद्मं **मणिरिव** रत्नमिव राजत इतिशेषः ॥ **द्वादशदलपद्मकर्णिकान्तर्गताया स्त्रिकोणाभिधायाः शक्त्या अन्तःस्थिता विद्युदाकारा काचित् प्रसिद्धाशक्तिः तप्तकांचनवर्णो बाणनामा लिङ्गाकारशिवोऽप्यास्ते तस्यतुबाणनाम्नः शिवस्यशिरसि मणिरिव सूक्ष्मरन्ध्रानुयोगि लक्ष्म्यालयभूतमष्टदलपद्मं वर्तत इतिभावार्थः** (शार्दूल विक्रीडित वृ०) ॥४॥

ध्यायेदिति—**यो** जनः एवम्भूतं **पंङ्कजम्** अनाहतपद्मं **हृदि** मनसि **ध्यायेत्** चिन्तयेत्। सजनः **वाचामीश्वरः** वाचस्पति र्बृहस्पतितुल्यो भवतीत्यर्थः। सजन **ईश्वरोऽपि** हरसदृशोऽपि सन् **जगतीरक्षाविशक्षमः** जगतीनां स्वर्गमर्त्यपातालानां रक्षणे पालने नाशने संहारकरणेच क्षमः समर्थो भवति। **पङ्कजं** की०, **सुरतरुं** कल्पवृक्षतुल्यं साधकानामभिष्टसम्पादकत्त्वादितिभावः। पुनः की०, **देवस्य** क्रीडनशीलस्य **शर्वस्य** शिवस्य **पीठालयं** निवासस्थानम्। पुनः की०, **अनिलहीनदीपकलिका हंसेन** वायुरहितदीपशिखाकारहंसेन जीवात्मना **संशोभितं** युक्तम्। पुनः की०, **भानोर्मण्डलेति** भानोः सूर्य्यस्य मण्डलेन मण्डितं भूषितं यदन्तरं मध्यस्थानं तत्र लसत् दीप्यमानं यत् किंजल्कं केसरं तस्यशोभाधरं शोभायुक्तम् (शार्दूल वि० वृ०) ॥५॥

योगीश इति—"योजन एतत्पद्मंध्यायेदिति पूर्वेणान्वयः" सजनः **योगीशो** भवति योगिश्रेष्ठोभवति। **अनिशं** निरन्तरं **कान्ताकुलस्य** योषिल्लोकस्य **प्रियात्** स्वामिनः **प्रियतमः** अतिशयेन प्रीतिकरो भवति। **ज्ञानीशोऽपि** ज्ञानिश्रेष्ठश्च भवति। पुनः की०, **कृती** कृतज्ञः। पुनः की०, **जितेन्द्रियगणः** वशीकृत इन्द्रियगण इन्द्रियसमूहो येन तादृशः। पुनः की०, **ध्यानावधानेक्षमः** अत्यन्तैकाग्रतया ध्यानकरणे समर्थः। पुनः की०, **गद्यैः** वाक्यावलिप्रबन्धैः **पद्यपदादिभिश्च** श्लोकचरणादिभिश्च करणभूतैः **सततं** निरन्तरं **काव्याम्बुधारावहः** काव्यं रसात्मकं वाक्यं तदेव अम्बु तस्यधारावहः धारास्पदम् विलक्षणकविर्भवतीत्यर्थः। पुनः की०, **लक्ष्मीरंजनदैवतं** लक्ष्म्यारंजनमनुरागोयत्र तादृशं च **तदैवतं** नारायणस्तत्तुल्यः सन् **क्षणात्** तत्क्षणात् **परपुरे** परशरीरे **प्रवेष्टुं** प्रवेशं कर्त्तुं **शक्तः** समर्थो भवतीतिशेषः (शार्दूल वि० वृ०) ॥६॥

॥ भाषाटीका ॥

उक्त **मणीपूरक** पद्मसे ऊपर हृदयमें अतिसुन्दर बन्धूक पुष्पके समान लालवर्ण द्वादशदलका एक कमलहै जिसकी बारहों पत्तियोंपर (क) से (ठ) तक अर्थात् कँ खँ गँ घँ ङँ चँ छँ जँ झँ ञँ टँ ठं ये बारह अक्षर सिन्दूर वर्ण शोभायमान होरहेहैं, इसी पद्मका नाम **अनाहत चक्र** है जो कल्पवृक्षके समान फलदायक है, वरु कल्पवृक्षसे बढ़कर बाञ्छा से अधिक फलका देनेवालाहै अथवा जिस बाञ्छासे आधिक कोई बाञ्छा नहीं ऐसी जो मुक्ति तिसको देनेवालाहै, इसके मध्य **षट्कोण** धूम्रवर्ण वायुका मंडल शोभायमान होरहाहै ॥ १ ॥

उक्त **षट्कोण** वायुमंडलके मध्य अत्यन्तश्रेष्ठ, मधुरमूर्त्ति, धूम्रवर्ण, चतुर्भुजी मृगा* पर सवार यँ वायुबीज है जिस बीजकेमध्य हंसवर्ण अर्थात् शुक्लवर्ण द्विभुज **ईशान** नाम शिव तीनोंलोकोंको अर्थात् स्वर्ग, मर्त पाताल निवासियोंको एकहस्तसे अभयपद अर्थात् मुक्ति और दूसरे हस्तसे औरभी नानाप्रकारके वरदान देतेहुए वर्तमान हैं, साधकोंको योग सिद्धि निमित्त इस स्थानमें ऐसाही ध्यानकरनाचाहिये ॥२॥

* वायुका वाहन मृगाहै इसलिये उसके बीजका भी वाहन मृगा है।

उक्त यँ बीजके मध्य ईशान नाम शिवके समीप **काकिनी** नाम देवी नवीनविद्युतके समान पीतवर्णी तीननेत्रवाली सर्वप्रकार कल्याणदायिनी विविध अलंकारयुक्त हर्षपूर्वक योगियोंकी हितकरनेवाली, हर्षित चित, अमृतमयहृदय, चारों भुजाओंमें पाश, कपाल, सुन्दर वर औ अभय औ गलेमें हाड़की माला धारणकिये वर्तमान होरहीहै ॥३॥

उक्त **अनाहतपद्म**की कर्णिकामें **त्रिकोणा** नामकी शक्ति शोभायमान होरहीहै, तिसके मध्य कोटि विद्युत समान सुन्दरशरीर तीननेत्रवाली एक **प्रसिधा** शक्ति निवास करती है, जिसके साथ **बाणाख्य** नाम द्विभुज शिवलिङ्गके स्वर्णके समान कुमकुमसे शोभित अङ्ग विराजमान है जिसके मस्तक पर एक छिद्र है, इस छिद्र * के साथ मणिके समान जगमगाताहुआ लक्ष्मीका उत्तमस्थान अर्थात् अष्टदलकमल है ॥४॥

जो प्राणी उक्त कमल अर्थात् अनाहतचक्र को हृदयमें ध्यान करता है वह बृहस्पतिके तुल्य वचनरचनामें अत्यन्तचतुर होजाताहै औ ईश्वरके समान तीनोंलोकोंकी सृष्टि, संहार, पालन करनेमें समर्थ होताहै अर्थात् ईशत्व सिद्धि उसे प्राप्त होती है, यह कमल कैसा है कि सुरतरु अर्थात कल्पवृक्षके समान सर्वप्रकारकी कामनाओंका पूर्णकरनेवाला है और शर्व अर्थात् शिवका निवासस्थान है, फिर वायुहीन दीप शिखाके समान हंस अर्थात् जीवात्मा करके सुशोभित है, और भानु मण्डलसे मण्डित है तिस भानुमण्डलके मध्य इसके किञ्जल्क अर्थात् केसरकी शोभा अत्यन्त कमनीयहै ॥५॥

फिर इसका ध्यान करनेवाला योगियोंमें श्रेष्ठ ऐसा सुन्दर स्वरूप होजाता है कि कामिनियां अपने २ पतिके रहते भी उसे प्राणसे अधिक प्यार करती हैं, फिर ज्ञानिशिरोमणि, कृतज्ञ, जितेन्द्रिय अत्यन्त शान्तिके साथ ध्यान धारणामें कुशल, गद्य पद्य रचनामें प्रवीण अर्थात् उत्तम कवि, काव्यधारा अर्थात् कवितारूपी अमृतधाराका बहानेवाला होताहै, फिर लक्ष्मीके सङ्ग जो विलास करनेवाले नारायण तिनके तुल्य होकर क्षणमात्रमें अपने शरीरसे दूसरे शरीरमें प्रवेशकरजानेमें समर्थहोजाता है। उक्त कमलसे बायींओर बाणाख्यके छिद्र सम्बन्धी जो गुप्तरूपसे एक अष्टदलकमल है उसके ध्यानका भी उक्तप्रकारही फल है ॥६॥

* यह छिद्र अत्यन्त प्रकाशमान है इसी होकर ध्यान करनेसे अष्टदल कमलका दर्शन होताहै, प्राणायाम द्वारा जिसके प्रफुल्लित होनेसे पद्मस्थनारायणका दर्शन होने लगता है ।

अथ षोड़शदलपद्मवर्णनम् ।

विशुद्धाख्यं कण्ठे सरसिज ममलं धूम्रधूम्राभ भासं स्वरैः सर्वैः शोणैर्दलपरिलसितैर्दीपितं दीप्तियुक्तं ॥ समास्ते पूर्णेन्दुप्रथिततमनभोमण्डलं वृत्तरूपं हिमच्छायानागोपरिलसिततनोः शुक्लवर्णाम्बरस्य ॥ १ ॥ भुजैः पाशाभीत्यङ्कुशवरलसितैः शोभिताङ्गस्य तस्य मनोरङ्के नित्यं निवसतिगिरजाभिन्नदेहो हिमाभः ॥ त्रिनेत्रः पंचास्योलसितदशभुजो व्याघ्रचर्म्माम्बराढ्यः सदापूर्व्वोदेवः शिव इति समाख्यानसिद्धप्रसिद्धः ॥ २ ॥ सुधासिन्धोः शुद्धा निवसति कमले शाकिनी पीतवस्त्रा शरंचापंपाशं शृणिमपि दधतिहस्तपद्मैश्चतुर्भिः ॥ सुधांशोः सम्पूर्ण शशपरिरहितं मण्डलं कर्णिकायाम् महामोक्षद्वारं श्रियमभिमतशीलस्य शुद्धेन्द्रियस्य ॥३॥ इहस्थाने चित्तं निरवधि निधायान्तपवनो यदि क्रूरोयोगी चलयति समस्तं त्रिभुवनम् ॥ न च ब्रह्मा विष्णुर्नच हरिहरो नैव खमणि स्तदीयंसामर्थ्यं शमयितुमलं नापि गणपः ॥ ४ ॥ इहस्थाने चित्तं विमलमधिनिधा यात्तसम्पूर्णयोगः कविर्वाग्मी ज्ञानी स भवति निरतां साधकः शान्तचेताः ॥ त्रिलोकानांदर्शी सकलहितकरो रोगशोकप्रमुक्तः चिरंजीवी जीवी निरवधि विपदां ध्वंसहंसप्रकाशः ॥५॥

॥ भाष्यम् ॥

विशुद्धाख्यमिति—(युग्मम्) **कण्ठे** गलदेशे **विशुद्धाख्यं सरसिजं** पद्मं चिन्तयेदितिशेषः। कीदृशम् **अमलं** निर्म्मलम्। पुनः की०, **धूम्रधूम्राभभासम्** अतिशयधूम्रवर्णः भासः दीप्तिर्यस्य तादृशम्। पुनः कीदृशं, **दलपरिलसितैः** षोड़शपत्रोपरिस्थितैः **शोणैः** रक्तवर्णैः **सर्वैः स्वरैः** अ आ इत्यादि षोड़शभिरज्वर्णैः **दीपितं** प्रकाशितं युक्तमित्यर्थः। तस्मिन् पद्मे **पूर्णेन्दुप्रथिततमनभोमण्डलम्** पूर्णचन्द्रेण प्रथिततमम् अतिशयेन प्रसृतंविश्रुतम्यानभोमण्डलम् आकाशमण्डलम् **समास्ते** सम्यग्वर्तते। की० **वृत्तरूपं** वर्त्तुलाकारम्। पुनः की०, **दीप्तियुक्तं** कान्तियुक्तम्। **तस्य** प्रसिद्धस्य **मनोः** हँ रूपाकाशबीजस्य **अंके** क्रोड़े **शिवइति देवः नित्यं** सततं **निवसति** तिष्ठति। **मनोः** कीदृशस्य **हिमच्छाया नागोपरिलसिततनोः** हिमच्छायया हिमसदृशकान्त्या नागोपरिलसिता हस्त्युपरि प्रकाशिता दीपिता तनुः शरीरं यस्य तादृशस्य, नागोपरिस्थितहिमवर्णस्य। पुनः की०, **शुक्लवर्णाम्बरस्य** शुक्लवर्णमम्बरं वस्त्रं यस्य तादृशस्य (शोभा वृ०) तल्लक्षणम् रसैरश्वैरश्वैर्यमननततगैर्गेन शोभेयमुक्ता ॥१॥

भुजैरिति—पुनः कीदृशस्य **भुजैश्चतुर्भिस्तैः शोभितांगस्य**

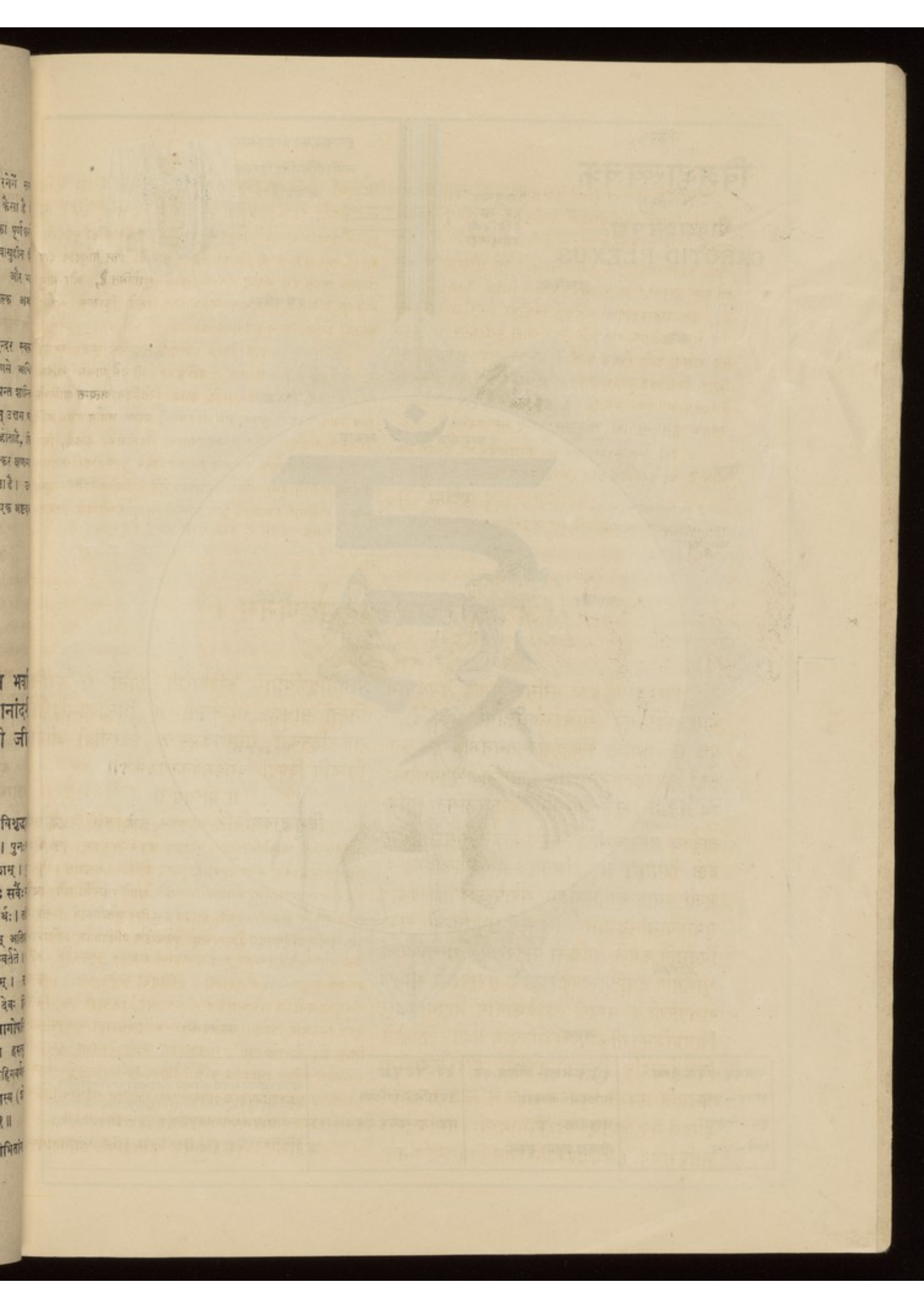

नंबर ५

विशुद्धाख्यचक्र

(अर्थात)

षोडशदलपद्म.

CAROTID PLEXUS

नाम चक्र – विशुद्धाख्य.	दलोंके अक्षर – अं से अः तक.	देव – पंच वक्र.	ध्यान फल
स्थान – कण्ठ.	नाम तत्व – आकाश.	देवशक्ति – शाकिनी.	काव्य रचनामे समर्थ ज्ञानवान उत्तम वक्ता शांत चित्त त्रिलोक दर्शी सर्व हितकारी आरोग्य चिरंजीवी और तेजस्वी होताहै.
दल – षोडश.	तत्वबीज – हं.	यंत्र – शून्यचक्र (गोलाकार)	अंग्रेजी नाम उन नाडियोंके समूहका जो इन चक्रोंसे संबंध रखतीहै CAROTID PLEXUS
वर्ण – धूम्र.	बीजका वाहन – हस्ती		

शोभितमङ्गं यस्य तादृशस्य चतुर्भुजस्येत्यर्थः भुजैः कीदृशैः **पाशाभीत्यंकुशवरलसितैः** पाशश्च, अभीतिश्च, अंकुशश्च, वरश्च, पाशाभीत्यंकुशवरास्तैः लसितैः शोभितैः। पाशादिचतुष्टयविशिष्टचतुर्हस्तयुक्तैरित्यर्थः। देवः कीदृशः **गिरिजाभिन्नदेहः** गिरिजायाः पार्वत्या अभिन्नमनतिरिक्तं शरीरं यस्य तादृशः गिरिजार्द्धाङ्गविशिष्टशरीर इत्यर्थः। पुनः की०, **हिमाभः** शुक्लवर्णः। पुनः की०, **त्रिनेत्रः** त्र्यम्बकः। पुनः की०, **पंचास्यः** पंचमुखः। पुनः की०, **लसितदशभुजः** लसिता दीपिताः मनोरमा इतियावत् दशभुजा दश हस्ता यस्य तादृशः दशहस्तविशिष्ट इत्यर्थः। पुनः की०, **व्याघ्रचर्म्माम्बराढ्यः** व्याघ्रचर्म्म व्याघ्राजिनम् अम्बरं वस्त्रं तेन आढ्यः युक्तः परिधानीकृतव्याघ्रचर्म्मेत्यर्थः। पुनः की०, **शिवइति सुसमाख्यानासिद्धप्रसिद्धः** शिवइति सुसमाख्यानम् सुन्दराभिधानं तेन सिद्धानां देवयोनिविशेषाणां **प्रसिद्धः** ख्यातः। **शिवोदेवः** की०, **सदा** इति पूर्व्व यस्य तादृशः सदाशिव इति यावत्।२। **कण्ठदेशे षोडशदलस्थितषोडश स्वरवर्णयुक्तं निर्म्मलं विशुद्धाख्यपद्मं वर्त्तते तदन्तः पूर्णेन्दुयुक्तं वर्तुलाकारं नभोमण्डलं वर्तते तन्मध्ये नागोपरिस्थितशुक्लवर्णचतुर्भुज हं बीजस्य क्रोडे गिरिजार्द्धाङ्गः पंचास्यः शुक्लवर्णः व्याघ्रचर्म्माम्बराढ्यः सदाशिवो निवसतीतिभावः** (शोभा वृ०) ॥ १, २॥

सुधेति—**सुधासिन्धौ** पीयूषाश्रये **कमले** विशुधाख्यपद्मे **शाकिनीनाम्नी** शक्तिर्निवसति **तिष्ठति**। शाकिनी कीदृशी **शुद्धा** निर्म्मला। पुनः की०, **पीतवस्त्रा** पीताम्बरा। पुनः की०, **चतुर्भिर्हस्तपद्मैः** चतुस्संख्यकैः करकमलैः **शरं** बाणं **चापं** धनुः **पाशं** शस्त्रविशेषं **शृणिमपि** अंकुशं च **दधती** धारयन्ती बाणधनुष्पाशांकुशविशिष्टचतुर्भुजेत्यर्थः। **कर्णिकायाम्** विशुद्धाख्यपद्मस्य कर्णिकायां **सुधांशोश्चन्द्रस्य सम्पूर्ण मण्डलं** षोडशकलायुक्तं चक्रं वर्त्तते। कीदृशम् **शशपरिरहितम्** शशरूप कलङ्कहीनम्। पुनः की०, **श्रियमभिमतशीलस्य** लक्ष्म्याभिलाषिनः **शुद्धेन्द्रियस्य** जितेन्द्रियस्य **महामोक्षद्वारम्** महामोक्षो निर्वाणः तस्यद्वारं वर्त्म॥ **पुनःतस्मिन्कमले विशुद्धाख्ये पीतवस्त्रा चतुर्भुजा शाकिनी शक्तिस्तिष्ठति, तत्कर्णिकायां योगिजनस्य महामोक्षद्वारं कलङ्करहितं पूर्णचन्द्रमण्डल मास्तेतिभावः** (शोभा वृ०) ॥ ३॥

इहस्थानइति—**इहस्थाने** विशुद्धाख्यपद्मे **निरवधि** निर्नीस्ति अवधिर्मर्य्यादा यस्मिन्कर्म्मणि तथा तथा असीमेति यावत् सततमित्यर्थः। **चित्तं निधाय** मनः सम्बध्य, **आत्तपवनः** गृहीतप्राणः सन् कुम्भकं कृत्वेतियावत्। **योगी** योगाभ्यासी योगिजनो यदि **क्रुद्धः** कुपितः स्यात् तर्हि **समस्तं त्रिभुवनं** त्रैलोक्यं **चलयति** कम्पयति। **तदीयं** तस्य योगिजनस्य इदं त्रिभुवनचालनरूपं सामर्थ्यं **शमयितुं** शान्त्वयितुं **अलं** समर्थः न भवतीतिशेषः। कः समर्थो न भवतीत्याह। **तत्र ब्रह्मा** सृष्टिकर्त्ता **नच विष्णुः** पालनकर्त्ता नच **हरिहरो** हरिहरात्मक ईश्वरः **नैव खमणिः सूर्य्यः नापि गणपः** गणेशोऽपि न [शोभा वृ०] ॥ ४॥

इहस्थानइति—**इहस्थाने** विशुद्धाख्यपद्मे **यो विमलं** स्वच्छं **चित्तं** मनः **अधिनिधाय** संस्थाप्य **आत्तसंपूर्णयोगः** गृहीत संपूर्ण योगाङ्गः **स** साधकः योगाभ्यासी **कविः** काव्यकर्त्ता भवति। पुनः कीदृशः, **वाग्मी** उत्तमवक्ता। पुनः की०, **ज्ञानी** प्रशस्तज्ञानवान्। पुनः की०, **नितरां शान्तचेता** अत्यन्तशान्तं वशीभूतं चेतः चित्तं यस्य तादृशः वशीकृतमनस्क इत्यर्थः। पुनः की०, **त्रिलोकानांदर्शी** त्रिलोकज्ञो भवती। पुनः की०, **सकलहितकरः** सर्वप्राणिकल्याणकरः। पुनः की०, **रोगशोकप्रमुक्तः** सकलामयक्लेशाभ्यां रहितः। **स जीवी** प्राणी **चिरंजीवी** दीर्घायुः। पुनः की०, **निरवधि** निर्मर्य्यादम् **विपदां** विपतिनां **ध्वंसे हंसप्रकाशः** नाशकरणे हंसस्य सूर्य्यस्येव प्रकाशोयस्य तादृशः। विपन्नाशको भवतीत्यर्थः (शोभा वृ०) ॥ ५॥

॥ भाषाटीका ॥

१, २, श्लोकोंका टीका एकसाथ कीयाजाताहै। पूर्वोक्त कमलसे ऊपर कण्ठके मध्यमें षोड़शदलका एककमल निर्म्मल धूम्रवर्णकाहै जिसके सोल हों पत्तियोंपर (अ) से(अः) तक सोलहों स्वर अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, ऌ, ॡ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः रक्तवर्ण शोभायमान होरहे हैं, इसीको **विशुद्धाख्यचक्र** कहतेहैं, इसकमलके मध्य गोलाकार आकाश मंडल अर्थात् शून्यचक्र पूर्णचन्द्रके प्रकाशसे भराहुआ शोभायमान हो रहाहै, इसीस्थानमें हस्तीपर सवार हैं आकाशबीज शुक्लवर्ण चतुर्भुजीरूप से शुक्लवस्त्र धारणकिये वर्त्तमानहै जिसकी चारों भुजाओंमें पाश, अभीति अंकुश, वर ये चारोंपदार्थ शोभायमान होरहेहैं, इस हंकार आकाशबीज के क्रोड़ (गोद) में अर्द्धाङ्ग अर्थात् हरगौर्य्याख्य श्री सदाशिव हिमसमान उज्ज्वलअङ्ग, सिद्धोंमें प्रसिद्ध, त्रिनेत्र, पञ्चमुख, दशभुज, व्याघ्रचर्मको अम्बर समान कटिमें धारणकिये वर्त्तमानहैं जो सदा अपने भक्तोंको नाना प्रकारके कल्याण औ सिद्धि देनेमें समर्थ हैं ॥ १, २ ॥

इस अमृत भरे कमलके मध्य श्री **सदाशिव**के समीप पीतवस्त्र पहने चारों भुजाओंमें शर, चाप, पाश, औ अंकुश धारणकिये निर्म्मल शुक्लवर्ण **शाकिनी** नाम देवी निवास करतीहैं, फिर इसी कमलकी कर्णिकामें कलंकरहित षोड़शकलायुक्त पूर्ण चन्द्रमण्डल शोभायमान होरहाहै जो सकल श्री वा पराक्रमके अभिलाषी जितेन्द्रिय पुरुषोंके महामोक्षका द्वारहै ॥ ३॥

जो साधक प्रतिक्षण इस स्थानमें मनलगाये अर्थात् चित्तवृत्तिको निरोधकिये वायुको ग्रहण करताहुआ अर्थात् पूरक* करताहुआ योगमें प्रवृत्त होताहै, वह योगी यदि क्रोधकरे तो समस्त त्रिभुवनको चलायमान† करदे और उसके इस क्रोधको ब्रह्मा, विष्णु, हरिहर, सूर्य्य, गणेश, कोई शमन करनेको समर्थ न होवे ॥ ४॥

जो योगी सम्पूर्ण योगाङ्गको धारणकिये इस विशुद्धाख्यचक्र को सम्यक प्रकारसे ध्यान करताहै वह अच्छेप्रकार काव्य करनेमें समर्थ, उत्तमवक्ता, ज्ञानवान, शान्तचित्त, त्रिलोकदर्शी अर्थात् तीनों लोकोंका वृत्तान्त जाननेवाला, सर्व हितकारी और सर्वप्रकार रोग शोक रहित, हो जाता है, फिर चिरंजीवी औ सूर्य्यकी किरणोंके समान सर्वप्रकारकी विपत्तिरूपी अन्धकारके नाश करनेमें समर्थ होजाताहै ॥ ५॥

---

* इसी स्थानसे पूरक समय वायुको ब्रह्मरन्ध्रकी ओर लेजाना चाहिये (गुरु द्वारा सीखो)।

† जैसे विश्वामित्र।

अथ द्विदलपद्मवर्णनम् ।

आज्ञानामाम्बुजं तद्विमकरसदृशं ध्यानधामप्रकाशं हक्षाभ्यांवैकलाभ्यां परिलसितवपुर्नेत्रपत्रंसुशुभ्रम् ॥ तन्मध्ये हाकिनीसा शशिसमधवला वक्त्रषट्कंदधाना विद्यामुद्रांकपालं डमरुजपवटी विभ्रती शुद्धचित्ता ॥१॥ एततपद्मान्तराले निवसति च मनः सूक्ष्मरूपप्रसिद्धं योनौ तत्कर्णिकायामितर शिवपदं लिङ्गचिन्हप्रकाशम् ॥ विद्युन्माला विलासं परमकुलपदं ब्रह्मसूत्रप्रबोधं वेदानामादिबीजं स्थिरतरहृदयश्चिन्तयेत्तत्क्रमेण ॥२॥ ध्यानात्मा साधकेन्द्रो भवति परपुरे शीघ्रगामी मुनीन्द्रः सर्व्वज्ञः सर्व दर्शी सकलहितकरः सर्व्वशास्त्रार्थवेत्ता ॥ अद्वैताचार वादी विलसति परमाऽपूर्वसिद्धिप्रसिद्धिः दीर्घायुः सोऽपिकर्त्ता त्रिभवनभवने संहृतौ पालनेवा ॥३॥ तदन्तश्चक्रेऽस्मिन्निवसतिसततं शुद्धबुद्धान्तरात्मा प्रदीपाभज्योतिः प्रणवविरचनारूपवर्णप्रकाशः ॥ तदूर्ध्वे चन्द्रार्धस्तदुपरि विलसद्बिन्दुरूपी मकार स्तदाद्योनादोऽसौ वलधवलसुधाधारसन्तानहासी ॥४॥ इहस्थाने लीने सुसुखसदने चेतसिपुरं निरालम्बां वध्वा परमगुरुसेवासुनिरतः ॥ सदाभ्यासाद् योगी पवनसुहृदां पश्यति कलां ततस्तन्मध्यान्तः प्रविलसितरूपानपिसदा ॥५॥ ज्वलद्दीपाकारं च तदपिनवीनार्कबहुलप्रकाशं ज्योतिर्वा गगनधरणीमध्यलसितम् ॥ इहस्थाने साक्षाद्भवति भगवान् पूर्णविभवो ऽव्ययः साक्षात् वन्हिः शशिमिहिरयोर्मण्डलइव ॥६॥ इहस्थाने विष्णोरतुलपरमामोदमधुरे समारोप्य प्राणान् प्रमुदितमनाः प्राणनिधने ॥ परं नित्यं देवं पुरुषमज माद्यं त्रिजगतां पुराणं योगीन्द्रः प्रविशति च वेदान्तविदितम् ॥७॥ लयस्थानं वायोस्तदुपरि च महानन्दरूपंशिवार्द्धं शिवाकारं शान्तं वरदमभयदं शुद्धबोधप्रकाशम् ॥ यदा योगी पश्येद्गुरुचरणसुसेवानुरक्तः सुसिक्त स्तदा वाचां सिद्धिः करकमलतलेतस्य भूयात् सदैव ॥८॥

॥ भाष्यम् ॥

आज्ञेति—भ्रूवोर्मध्ये **तत्** प्रसिद्धं **आज्ञानाम** आज्ञाख्यम् **अम्बुजं** पद्मम् आज्ञाख्यकमल मितियावत् वर्तत इतिशेषः । कीदृशं हिमकरसदृशं चन्द्रतुल्यवर्णम् । पुनः की०, **ध्यानधामप्रकाशं** ध्यान धाम्नि भ्रूमध्ये प्रकाशो विकाशो यस्य तादृशं भ्रूमध्ये विकशितमित्यर्थः । की० **हक्षाभ्यां** ह, क्ष इतिवर्णाभ्यां वै इति निश्चयेन **परिलसितवपुर्नेत्रपत्रम्** परिलसिते सुशोभिते वपुषः कायस्य नेत्रे द्वे पत्रेदले यस्य तादृशम्। कीदृशाभ्यां हक्षाभ्यां, **कलाभ्यां** मात्रायुक्ताभ्यां, यद्वा **कलाभ्यां** षोड़शांशचन्द्रसमरेखायुक्ताभ्यां चन्द्रबिन्दुसहिताभ्यामिति यावत् । पुनः की०, **सुशुभ्रम्** अतिविशदम् । तन्मध्ये तस्य आज्ञाचक्रस्यमध्ये **सा** प्रसिद्धा **शशिसमधवला** चन्द्रतुल्यशुक्लवर्णा **हाकिनी** शक्तिरास्ते । कीदृशी **वक्त्रषट्कं दधाना** षण्मुखीत्यर्थः । पुनः की०, **विद्यामुद्रां** ज्ञानमुद्रां, **कपालं** मुण्डं, **डमरुं** डिमडिमं **जपवटीं** जपमालां **विभ्रती** संधारयन्ती । पुनः की०, **शुद्धचित्ता** शुद्धं निर्म्मलं चित्तं यस्यास्तादृशी ॥ भ्रूमध्यदेशस्फुटितस्य ह, क्ष, वर्णद्वययुक्तपत्रद्वयविशिष्टस्य **आज्ञाख्यपद्मस्यान्त श्चन्द्रवच्छुक्लवर्णा षण्मुखी चतुर्भुजा हाकिनीनाम्नी शक्तिरास्त** इति भावार्थः (स्रग्धरा वृ०) ॥१॥

एतदिति—पुनः **एतत्पद्मान्तराले** एतत्पद्मस्य आज्ञाचक्रस्य अन्तराले मध्ये **मनोनिवसति** मनोवर्त्तते। कीदृशम् **सूक्ष्मरूपप्रसिद्धम्** सूक्ष्मरूपेण अदृष्टगोचराकारेण प्रसिद्धं विख्यातम् । **तत्कर्णिकायां योनौ** तस्य आज्ञाचक्रस्य बीजकोशे **इतरशिवपदम्** इतराख्यशिवस्थानं चिन्तयेदित्यर्थः । की०, **लिङ्गचिह्नप्रकाशम्** लिङ्गाकारमूर्त्तेः प्रकाशो यत्र तादृशम् । पुनः की०, **विद्युन्मालाविलासं** विद्युत्समूहवत् विलासो दीप्तिर्यस्य ता० । पुनः की०, **परमकुलपदं** परमशक्तिस्थानम् अर्थात् शक्तयर्द्धाङ्गविशिष्टेतराख्यशिवस्थानमित्यर्थः । पुनः की०, **ब्रह्मसूत्रप्रबोधम्** ब्रह्मसूत्रस्य ब्रह्मनाड्या प्रबोधः ज्ञानं यस्मात्तादृशम् । पुनः की०, **वेदानामादिबीजं** ऋग्यजुःसामाथर्वणाम् आदिकारणम् प्रणवमित्यर्थः । तत् एतत्सर्वं **स्थिरतरहृदयः** अनन्यमनाः सन् **क्रमेण** क्रमशः **चिन्तयेत्** ध्यायेत्। क्रमो, यथा आदौ हाकिनी शक्ति स्ततोमनस्ततः कर्णिकान्तःस्थं शक्तियुतमितराख्यशिवलिङ्गम् । ततः प्रणवमिति क्रमेण चिन्तयेत् (स्रग्धरा वृ०) ॥२॥

ध्यानात्मेति—"चिन्तनफलमाह" **ध्यानात्मा** आज्ञापद्मध्यानैकचित्तः पुरुषः **साधकेन्द्रः** साधकश्रेष्ठो भवति । पुनः कीदृशः **परपुरे** परशरीरे **शीघ्रगामी** झटति प्रवेशनशीलो भवति । सज्ञनः **मुनिन्द्रो** मुनिश्रेष्ठः **सर्वज्ञः** समस्तवेत्ता, **सर्वदर्शी** सर्वदर्शनशीलः, **सकलहितकरः** सकलजनकल्याणकारी, **सर्वशास्त्रार्थवेत्ता** सकलशास्त्रज्ञः, अद्वैताचारवादी आत्मज्ञानमार्गप्रदर्शी च भवति । पुनः की०, **परमापूर्वसिद्धिप्रसिद्धः** परमा उत्कृष्टा अपूर्वा विलक्षणा यासिद्धिः तया अतिशयेन प्रसिद्धिः ख्यातिर्यस्य तादृशः सन् **विलसति** विलासंकरोति ॥

नंबर ६

आज्ञाचक्र.

(अर्थात)

द्विदलपद्म

MEDULLA.

नामचक्र - आज्ञा.	दलोंके अक्षर- ह, क्ष.	देव - लिङ्ग.	ध्यानफल.
स्थान- भ्रूमध्य.	नामतत्व - महतत्व.	देवशक्ति - हाकिनी.	वाक्यसिद्धि प्राप्त होतीहै.
दल - द्विदल.	तत्वबीज- ॐ	यंत्र - लिंगाकार.	अँग्रेजी नाम उन नाडीयोंके समुहका जो इन चक्रोंसे संबंध रखतीहै. MEDULLA.
वर्ण- श्वेत.	बीजका वाहन- नाद		

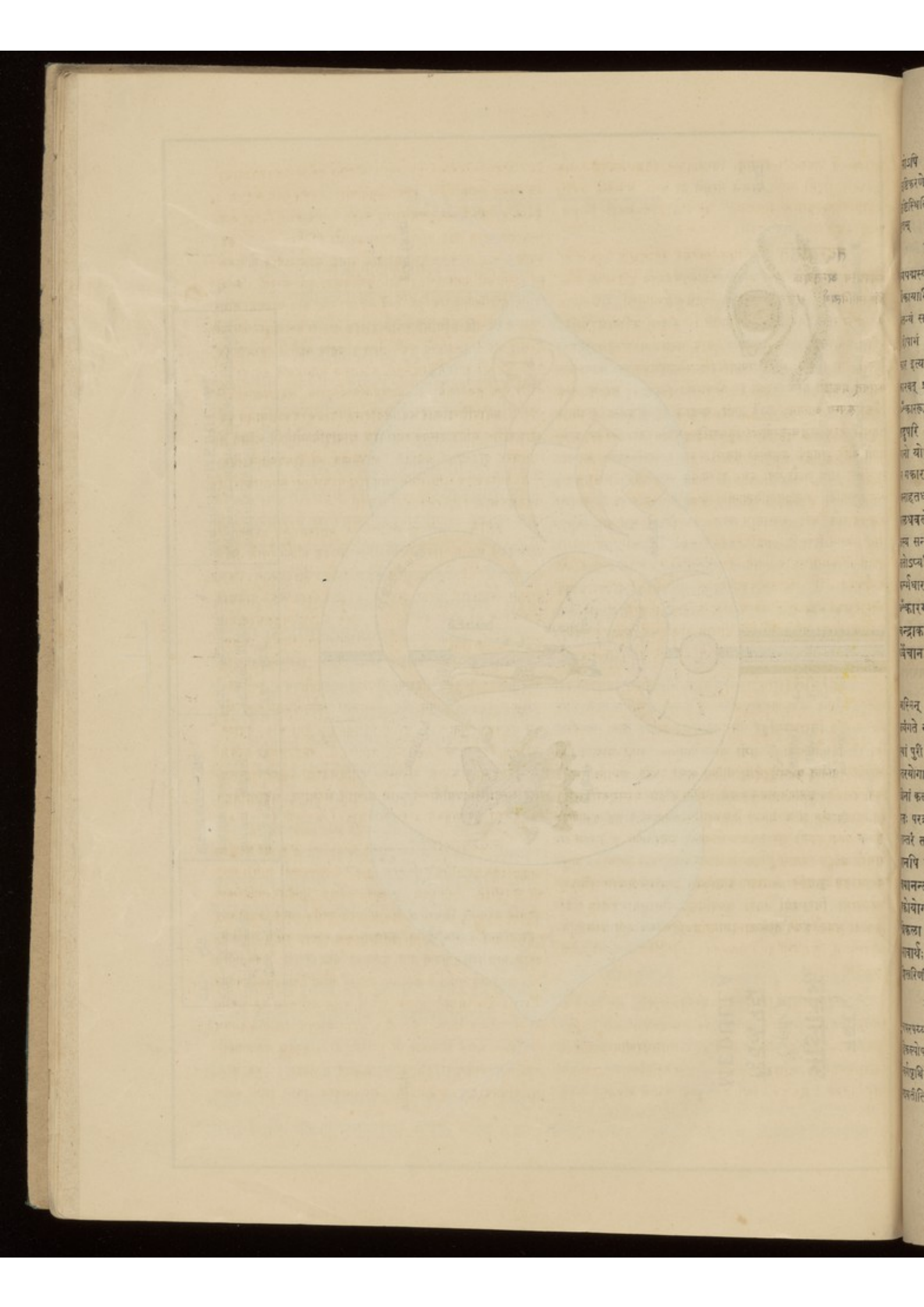

सोऽपि स साधकोऽपि दीर्घायुः चिरंजीवीसन् त्रिभुवनभवने जगत् सृष्टिकरणे, संहृतौ नाशने पालने संरक्षणे वा कर्त्ता विधायको भवति, सृष्टिस्थितिप्रलयकरो भवतीत्यर्थः । वा शब्दोत्र समुच्चयार्थः (स्रग्धरा वृत्तम् ॥ ३ ॥

तदन्तरिति—अस्मिन् एतस्मिन् **तदन्तश्चक्रे** तस्य आज्ञाख्यपद्मस्य **अन्तश्चक्रे** मण्डलान्तः आज्ञाख्यचक्रमध्य इति यावत् तत्कर्णिकायामित्यर्थः **शुद्धबुद्धान्तरात्मा** शुद्धिबुद्धिभ्यांयुक्तो योऽन्तरात्मा चैतन्यं स सततं निवसति निरन्तरंवर्त्तते । कीदृशः **प्रदीपाभज्योतिः** प्रदीपाभं दीपसदृशं ज्योतिः प्रकाशो यस्य तादृशः प्रज्वलितदीपशिखाकार इत्यर्थः । पुनः की०, **प्रणवाक्षिरचनारूपवर्णप्रकाशः** प्रणवाक्षराकारवत् प्रकाशो यस्य तादृशः । ॐकाररूप इत्यर्थः । **तदूर्ध्वे** तस्य ॐकाररूपस्य आत्मनः ऊर्ध्वे उपरि **चन्द्रार्द्धः** । अर्द्धचन्द्र इत्यर्थः । **तदुपरि** तस्य अर्द्धचन्द्रस्योपरि **विलसद्बिन्दुरूपीमकारः** विलसन् शोभमानो योबिन्दुस्तद्रूपी तदात्मको मकारो मवर्णः । अस्तीतिशेषः **तदाद्यः** स मकार आद्य आदौ भवः प्रथम इतियावत् यस्य तादृशः **असौ नादः** अनाहतध्वनिः अनाहतध्वनिस्थानमितियावत् वर्तत इतिशेषः । कीदृशः **बलधवलेति** बलो बलरामइव धवल उज्ज्वलो यः **सुधाधार श्चन्द्रः** तस्य सन्तानं विस्तृति श्चन्द्रकिरणप्रसृतिरित्यर्थः **तद्धासी** तत्तिरस्कारी ततोऽप्यधिकप्रसरणशील इत्यर्थः बलधवलश्चासौ सुधाधारसन्तानहासीवेति कर्म्मधारयः ॥ **आज्ञाख्यपद्मस्यान्तः प्रज्वलितदीपशिखाकारम् ॐकाररूपप्रकाशं शुद्धं चैतन्यं सदा संतिष्ठते । तस्योपरिदेशे अर्द्धचन्द्राकाररेखा वर्त्ततेऽस्योपरि दीप्यमानबिन्दुरूपो मकार एतदप्यूर्ध्वेचानाहतध्वनिस्थानमस्तीतिभावार्थः** (स्रग्धरा वृ०) ॥४॥

इहस्थानइति—**सुमुखसदने** अनुत्तमानन्दमयसद्मनि **इह** अस्मिन् **स्थाने** प्रदेशे अनाहतध्वनिस्थान इत्यर्थः । **चेतसि** चित्ते **लीने** लयंगते सति **निरालम्बांपुरं** निराश्रयांनगरीं **बद्धवा** कृत्वा अन्तरिक्षस्थां पुरीं निर्म्मायेत्यर्थः । **योगी** योगाभ्यासीजनः **सदाभ्यासात्** निरन्तरयोगानुष्ठानात् **पवनसुहृदाम्** अग्नीनां **कलां** ज्योतिः **पश्यति** अर्थादग्नेनां कलामिव कलामवलोकत इत्यर्थः । योगी कीदृशः **परमगुरुसेवासुनिरतः** परब्रह्मार्चनायां वा योगमार्गदर्शकश्रुश्रूषायामाशक्तः । **ततः** कलादर्शनान्तरं **तन्मध्यान्तः** तस्याःकलायामध्यान्तरे **सदा** सर्वदा **प्रविलसितरूपानपि** प्रदीपिताकारानपि नानाविधदिव्यरूपानपि पश्यतीत्यर्थः ॥ **अनुत्तमानन्दमयसद्मनि अनाहतध्वनिस्थाने मनासिलीनेसति गुरुश्रुश्रूषकोयोगी निराश्रयां नगरीं कल्पयित्वा योगानुष्ठानबलात् तत्राग्निकला मवलोकयन् तत्कलान्तर्नानाविधदिव्यरूपानपि पश्यतीतिभावार्थः** ॥ शिखरिणी वृ० । तल्लक्षणम् । रसैरुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी) ॥५॥

ज्वलद्दीपाकारमिति—**तदपिज्योतिर्वा** तत् प्रस्तुतं कलापरपर्य्यायं ज्योतिरेवापि तेजएवापि, अत्र वाशब्दएवार्थवाचक; । वास्याद्विकल्पोपमयो रेवार्थेच समुच्चय इतिकोशः" **गगनधरणीमध्यलसितम्** स्वर्गपृथिव्योर्मध्ये **लसितम्** दीपितम् प्रज्वलितमितियावत्, साधकः पश्यतीतिशेषः । अर्थादुपरि स्वर्गः अधः पृथ्वी तन्मध्ये यावत्स्थानं तत्सर्वमेव ज्योतिर्मय मवलोकत इतिभावः । कीदृशम् ज्योतिः, **ज्वलद्दीपाकारम्** ज्वलन् दीप्यमानो यः प्रदीपः तद्वदाकारः स्वरूपं यस्य तादृशम् । पुनः की०, **नवीनार्कबहुलप्रकाशम्** नवीनः प्रातःकालीनो योऽर्कः बालसूर्य्य इति यावत् तद्वद् बहुलः प्रचुरः प्रकाशो दीप्तिर्यस्य ता० । **इहस्थाने** अस्मिन् ज्योतीरूपस्थाने **भगवान्** परब्रह्म **साक्षाद्भवति** योगिजनस्य ज्ञानगोचरो भवतीत्यर्थः । की० **पूर्णविभवः** पूर्णः सम्पूर्णो विभवो विभुत्वं सृष्टिस्थितिसंहारकर्त्तृत्वं यस्य तादृशः । पुनः की०, **अव्ययः** नाशरहितः क इव **वह्निःशशिमिहिरयोर्मण्डलइव** यथा अग्निश्चन्द्रसूर्य्ययोर्मण्डले **साक्षाद्** भवति प्रत्यक्षगतो भवति तद्वत् । यद्वात्र वह्नेरिति षष्ठ्यन्तपदम् तर्हि वह्निमण्डले शशिमिहिरयोर्मण्डलेच भगवान् साक्षाद्भवति तथा इहस्थानेऽपि साक्षाद्भवतीत्यर्थः । एतत्रयस्थानेष्वीश्वरस्य सदाऽवस्थानादिति भावः॥ **प्रदीपशिखाकारं नवोदितदिनकरवत्प्रचुरप्रकाशमानम् पूर्वश्लोकवर्णित मग्निकलात्मकज्योतिरेव द्यावापृथिव्योर्मध्ये लसितं योगिजनस्य दृष्टिगोचरं भवति । अस्मिन्नेव ज्योतीरूपस्थानेऽग्निशशिसूर्य्यमण्डलइव सृष्टिस्थितिलयकरस्य परमात्मनः साक्षात्कारोऽपि भवतीतिभावः** [शिखरिणी वृ०] ॥ ६ ॥

इहेति—**योगीन्द्रो** योगिश्रेष्ठोजनः **प्रमुदितमनाः** हृष्टमनाः सन् **प्राणनिधने** प्राणत्यागसमये विष्णो र्नारायणस्य **इह** अस्मिन् **स्थाने** प्रदेशे उक्तविशेषणविशिष्टस्य आज्ञा नामक चक्रस्यान्तर्गते ज्योतिर्मयस्थान इतियावत् **प्राणान् समारोप्य** प्राणान् संस्थाप्य **परंपुरुषं** परब्रह्मस्वरूपं **प्रविशति** प्रवेशंकरोति तत्रैवलीनो भवतीत्यर्थः । स्थाने कीदृशे, **अतुलपरमामोद मधुरे** अतुलः अनुपमः तुलनारहित इति यावत् यः परमामोद उत्कृष्टानन्दः स एवमधु क्षौद्रंतद्विद्यतेऽस्य तस्मिन् अर्थात् अप्रतिमानुत्तमानन्दरूपमधुविशिष्टे । पुरुषं कीदृशम्, **नित्यम्** अविनाशिनम् । पुनः की०, **अजम्** जन्मरहितम् । पुनः की०, **त्रिजगतां** स्वर्गमर्त्यपातालानाम् **आद्यम्** प्रथमम् । पुनः की०, **पुराणं** चिरन्तनम् । पुनः की०, **वेदान्तविदितम्** वेदान्तशास्त्रेण प्रतिपादितं ज्ञातम्वा ॥ **प्रहृष्टमनस्को यतिजनोऽनुपमहर्षातिरेकयुक्ते ऽस्मिन्नेव पूर्णविभवस्य विष्णोराज्ञाख्यमण्डलान्तःस्थितज्योतीरूपे स्थाने प्राणान् संस्थाप्य वेदान्तविश्रुतं त्रिभुवनहेतुं पुराणपुरुषं प्रविशतीतिभावः** (शिखरिणी वृ०) ॥ ७ ॥

लयस्थानमिति—**योगी** योगाभ्यासी पुरुषः **गुरुचरणसेवासुनिरतः** गुरुपादपद्मशुश्रूषानुरक्तः सन् यदा यस्मिन्काले **वायोः** प्राणस्य **लयस्थानं** निरोधप्रदेशं पूर्वश्लोकोक्तविशेषणार्थविशिष्टज्योतिस्स्थानं **तदुपरि** तदनन्तरं **शिवार्द्धंच** अर्द्धाङ्गशिवंच **पश्येत्** ध्यानेनविजानीयात् **तदा** तस्मिन्काले तस्य योगिनः **करकमलतले** हस्तपद्मे **सदैव** सर्वस्मिन्नेवकाले **वाचांसिद्धि र्भूयात्** वाचां वाक्यानां सिद्धि र्निष्पत्तिः वाक्यसंसिद्धिरिति यावत्स्यात् अर्थात् स योगिजनः यद्वाक्यं ब्रवीति तदवितथमेवभवतीत्यभिप्रायः । की० **शिवार्द्धं** शिवायाः पार्वत्या अर्द्धम् अर्द्धावयवो यत्र तादृशम् अर्थात् दुर्गार्द्धाङ्गविशिष्टम् । पुनः की०, **महानन्दरूपम्** अत्यन्तानन्दमयम् । पुनः की०, **शान्तं** शान्तस्वरूपम् । पुनः की०, **वरदम्** भक्तजनमनोभिलषितसम्पादकम् । पुनः की०, **अभयदं** मोक्षप्रदम् । पुनः की०, **शुद्धबोधप्रकाशम्** शुद्धबोधस्य निर्म्मलज्ञानस्य प्रकाश उदयो यस्मात्

तादृशम्। एतच्छिवार्द्धदर्शनान्निर्म्मलज्ञानं भवतीत्यर्थः॥ **साधको यदा वायुलयप्रदेशं पूर्वोक्तज्योतिःस्थानं तदनन्तरमानन्दस्वरूपं शिवार्द्धंच ध्यायेत् तदा तस्य सदैव वाक्यसिद्धिर्हस्तगताभवेदिति भावार्थः** (शोभा वृ०) ॥८॥

॥ भाषाटीका ॥

भ्रूमध्य अर्थात् दोनों भउओंके बीच प्रकाशमान ललाटस्थानमें दोदलका एक कमल हिमकर अर्थात् चन्द्रमा समान शुक्लवर्णका है, इसीको **आज्ञाख्यपद्म** कहते हैं जिसके दोनों दलों पर अकारस्वरयुक्त औ चन्द्रविन्दु सहित (हँ) (क्षँ) दो अक्षर शोभायमान होरहेहैं, इस पद्मके मध्य चन्द्रमा समान शुक्लवर्ण स्वच्छ स्वरूप, निर्म्मलचित्त, षड्मुखी **हाकिनी** नाम देवी चारों भुजाओंमें, ज्ञानमुद्रा, कपाल, डमरु, जपवटी (**माला**) धारण किये विराजमान होरहीहै ॥१॥

फिर इस **आज्ञापद्म**के मध्य मनका निवास अति सूक्ष्मरूपसे है और इसी कमलकी कर्णिकाके बीच **इतराख्य** शिवस्थानहै जहां कोटि दामिनी समान दमकताहुआ अर्द्धाङ्ग **परमशक्ति** सहित **इतराख्य नाम** शिवलिङ्ग वर्त्तमान है जहांसे **ब्रह्मनाड़ी**का बोध होता है, इसी स्थान पर वेदोंका बीज प्रणव (ॐ) शोभायमान होरहाहै, साधकोंको चाहिये कि इस स्थानमें अत्यन्त स्थिरचित्त होकर क्रमसे उक्त पदार्थोंकी चिन्ता करें, अर्थात् आज्ञाख्य कमलके मध्य **हाकिनी** नाम देवी, तत्पश्चात् मन, तब अर्द्धाङ्ग परमशक्ति सहित **इतराख्य** शिवलिङ्ग, तत्पश्चात् प्रणव (ॐ) का ध्यानकरें, ऐसे ध्यान करनेसे और इस स्थानमें अत्यन्त स्थिर होकर नेत्रोंको उलटकर देखनेसे **मूलाधारपद्मसे सहस्रदलपद्म** तक लगी हुई ब्रह्मनाड़ीका बोध होताहै ॥२॥

जो प्राणी उक्त प्रकार इस स्थानमें ध्यान करता है वह साधकोंमें श्रेष्ठ, अपने शरीरसे दूसरे शरीरमें प्रवेश करजानेवाला, फिर मुनीन्द्र अर्थात् मुनियोंमें उत्तम, सर्व्वज्ञ, सर्व शास्त्रका जाननेवाला, सर्वदर्शी, सर्व हितकारी, अद्वैतवादी, अत्यन्त अपूर्व सिद्धियों विषय ख्यात, दीर्घजीवी, फिर तीनों लोककी रचना, पालन औ संहारमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वरके समान समर्थ होजाता है ॥३॥

फिर इस चक्रके मध्य दोनों भउहोंके बीच उक्त स्थानमें प्रणव वर्णात्मक अर्थात् ॐकार वर्णात्मक शुद्ध स्वरूप बुद्धिविशिष्ट प्रज्वलित दीपशिखाकार **अन्तरात्मा** निवास करता है, इस ॐकाररूप अन्तरात्माके ऊपर द्वितीयाके चन्द्रमा समान **अर्द्धचन्द्र** शोभा देरहाहै, तिसके ऊपर विन्दुरूपी **मकार** है तहांसे नादका आरम्भ है अर्थात् **अनाहतध्वनि** का स्थान है, यह **अनाहतस्थान** श्रीबलरामजीके अङ्ग ऐसा स्वच्छ और चन्द्रमाकी छिटकतीहुई किरणोंसे भी अधिक निर्म्मल शोभायमान होरहाहै ॥४॥

इस मुखसे भरेहुए अत्यन्त आनन्दमय **अनाहतध्वनिस्थान**में चित्तलीन होनेसे औ परमगुरु सेवा द्वारा विदित जो **निरालम्बमुद्रा** तिसके अभ्याससे अर्थात् **अन्तरिक्षपुरी**को निर्म्माण * कर अच्छे प्रकार चित्तको लीनकरनेसे साधक उत्तम योगी होकर पवनमुहत् अर्थात् अग्निकी कलाके समान आत्मज्योतिकलाका औ नानाप्रकारके विचित्ररूपोंका दर्शन पाकर सकल ब्रह्माण्ड अर्थात् सम्पूर्ण सृष्टिको आत्मज्योतिमय देखने लगताहै ॥५॥

फिर इसी उत्तम स्थान अर्थात् **निरालम्बपुरी**में बलतीहुई दीपशिखा औ प्रातःकालके बालरविके किरणोंके समान ऊपर आकाशमण्डलसे नीचे पृथ्वीमण्डल तक अर्थात नादविन्दुके मध्य पूर्ण ज्योतिही ज्योति देखपड़ती है और इसी स्थानमें साक्षात ईश्वर अविनाशी अपने पूर्णविभवको अर्थात् सृष्टि पालन संहारकी शक्तिको धारणकिये अग्नि, चन्द्र औ सूर्य्यमण्डलके समान सर्वात्माके साक्षीभूत प्रत्यक्षरूपसे प्रगट होतेहैं, अथवा जैसे अग्नि, सूर्य्य औ चन्द्रमामें सदा भगवान् निवास करते हैं, ऐसेही इस स्थानमें भी सदा जिनका अवस्थान है ॥६॥

इसी परममुखसे भरेहुए अपूर्व विष्णुपुरी परम ज्योतिमय मधुर स्थानमें अर्थात् उक्त **आज्ञाचक्र**में श्रेष्ठ योगीजन प्राणपरित्याग समय अत्यन्त आनन्दके साथ प्राण आरोपित कर उस श्रेष्ठ, नित्य, अविनाशी, अजन्मा, तीनोंलोकसे आदि अर्थात् सबसे प्रथम, पुराण, सनातन, वेदान्तवेद्य अर्थात् वेदान्तद्वारा जानने योग्य, परमपुरुषमें लय होजातेहैं। जैसे श्रीकृष्णभगवान्ने भी अर्जुनके प्रति गीतामें कहाहै कि "**प्रयाणकाले मनसाऽचलेन भक्त्यायुक्तो योगवलेन चैव। भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक् स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम्**" गीता अ० ८ श्लो० १०। अर्थात् जो प्राणी मरणकालमें स्थिरचित्त हो भक्तिपूर्वक औ योगबल द्वारा दोनों भ्रुवोंके मध्य प्राण आरोपित करलेताहै वह परमपुरुषको प्राप्त होताहै ॥७॥

यही **आज्ञाचक्र** कुम्भक द्वारा वायुके लय करनेका स्थान है अर्थात् पूर्वोक्त ॐकाराधिष्ठित स्थानसे ऊपर शिवलिङ्गाकार एक स्थान है जहां सम्पूर्ण शरीरका वायु प्राणायामके समय प्राणके साथ मिलकर लय होजाताहै, यदि साधक गुरुसेवा द्वारा इसी स्थानमें महानन्द, शान्त स्वरूप, अभय औ अभिष्टफलदायक, शुद्धबुद्धिके प्रकाश करनेवाले, शिवार्द्ध अर्थात् द्विभुज अर्द्धाङ्ग शिवका दर्शन पावे तो उसीक्षण उसको वाक्यसिद्धि करतलगत होजावे ॥८॥

* अन्तरिक्षपुरी निर्म्माण करना अर्थात् निरालम्बमुद्रा लगाना गुरुद्वारा जाना जाताहै लेखमें नहीं आसकता।

अथ सहस्रदलपद्मवर्णनम् ।

तदूर्ध्वे शङ्खिन्या निवसति शिखरे शून्यदेशप्रकाशं विसर्गाधः पद्मं दशशतदलं पूर्णपूर्णेन्दुशुभ्रम् ॥ अधोवक्त्रं कान्तं तरुणरविकलाकान्तकिञ्जल्कपुञ्जं ललाटाद्यै र्वर्णैः प्रविलसिततनुं केवलानन्दरूपम् ॥ १ ॥ समास्ते तत्रान्तः शशपरिरहितः शुद्धसम्पूर्णचन्द्रः स्फुरज्ज्योत्स्नाजालः परमरसचयस्निग्धसन्तानहासः ॥ त्रिकोणं तस्यान्तः स्फुरति च सततं विद्युदाकाररूपं तदन्तः शून्यन्तत् सकलसुरगुरुं चिन्तयेज्ञातिगुह्यम् ॥ २ ॥ सुगोप्यं तद्यत्नादतिशयपरमामोदसन्तानराशेः परं कन्दं सूक्ष्मं शशिसकलकलाशुद्धरूपप्रकाशम् ॥ इहस्थाने देवः परमशिवसमाख्यानसिद्धप्रसिद्धिः स्वरूपी सर्व्वात्मा रसविसरमितोऽज्ञानमोहान्धहंसः ॥ ३ ॥ सुधाधारासारं निरवधि विमुञ्चन्नतितरां यतेरात्मज्ञानं दिशतिभगवान्निर्म्मलमतेः ॥ समास्ते सर्व्वेशः सकलसुखसन्तानलहरीपरीवाहो हंसः परम इति नाम्ना परिचितः ॥ ४ ॥ शिवस्थानं शैवाः परमपुरुषं वैष्णवगणा लपन्तीति प्रायो हरिहरपदं केचिदपरे ॥ पदंदेव्या देवीचरणयुगलानन्दरसिका मुनीन्द्रा अप्यन्ये प्रकृतिपुरुषस्थानममलम् ॥ ५ ॥ इहस्थानं ज्ञात्वा नियतनिजचित्तो नरवरो नभूयात् संसारे क्वचिदपि च वद्धस्त्रिभुवने ॥ समग्राशक्तिः स्यान्नियममनसस्तस्य कृतिनः सदा कर्त्तुं हर्त्तुं खगतिरपि वाणी सुविमला ॥ ६ ॥ अत्रास्ते शिशुसूर्य्यसोदरकला चन्द्रस्य सा षोडशी शुद्धा नीरजसूक्ष्मतन्तुशतधाभागैकरूपा परा ॥ विद्युद्दामसमानकोमलतनु र्नित्योदिताधोमुखी पूर्णानन्दपरम्परातिविगलत्पीयूषधाराधरा ॥ ७ ॥ निर्व्वाणाख्यकला परात्परतरा सास्ते तदन्तर्गता केशाग्रस्य सहस्रधाविभजितस्यैकांशरूपा सती ॥ भूतानामधिदैवतं भगवती नित्यप्रबोधोदया चन्द्रार्द्धाङ्गसमानभङ्गुरवती सर्व्वार्कतुल्यप्रभा ॥ ८ ॥ एतस्या मध्यदेशे विलसति परमाऽपूर्व्वनिर्व्वाणशक्तिः कोट्यादित्यप्रकाशा त्रिभुवनजननी कोटिभागैकरूपा ॥ केशाग्रस्यातिगुह्या निरवधि विलसत्प्रेमधाराधरा सा सर्व्वेषां जीवभूता मुनिमनसि मुदा तत्वबोधं वहन्ती ॥ ९ ॥ तस्या मध्यान्तराले शिवपदममलं शाश्वतं योगिगम्यं नित्यानन्दाभिधानं परमकुलपदं शुद्धबोधप्रकाशम् ॥ केचिद्ब्रह्माभिधानं परमतिसुधियो वैष्णवास्तल्लपन्ति केचिद्धंसाख्य मेतत् किमपि सुकृतिनो मोक्षवर्त्मप्रकाशम् ॥ १० ॥

॥ भाष्यम् ॥

तदूर्ध्वइति—तदूर्ध्वे तस्य आज्ञाचक्रस्य ऊर्ध्वे उपरिभागे शङ्खिन्या एतदाख्याया नाड्याः शिखरे मस्तके विसर्गाधो विसर्गः शक्तिस्तस्य अधः तले दशशतदलंपद्मं सहस्रदलं पङ्कजं निवसति वर्त्तते । कीदृशम् शून्यदेशप्रकाशम् शून्यदेशे ब्रह्माण्डे प्रकाशः विकाशः स्फोट इति यावत् यस्य तादृशम् । पुनः की०, पूर्णपूर्णेन्दुशुभ्रम् पूर्णपूर्णोऽतिशयपूर्णो य इन्दुश्चन्द्रस्तद्वत् शुभ्रंशुक्लवर्णम् । पुनः की०, अधोवक्त्रम् अधोमुखम् । पुनः की०, कान्तं मनोहरम् । पुनः की०, तरुणेति तरुण्यो या रविकला मध्याह्नकालीनसूर्य्यरश्मयस्तद्वत्कान्तं मनोज्ञं किञ्जल्कपुञ्जं केशरसमूहो यस्मिन् ता० । पुनः की०, ललाटाद्यैर्वर्णैः ललाटः अकारः आद्यः प्रथमोयेषां तादृशैः अकारादिभिरक्षरैः प्रविलसिततनुम् प्रविलसिता सुशोभिता तनु राकारो यस्य तादृशम् । अकाराद्यक्षरविशिष्टसहस्रदलमित्यर्थः । पुनः की०, केवलानन्दरूपं नित्यानन्दस्वरूपम् ॥ आज्ञाचक्रस्योपरिदेशे शङ्खिनीनामिकाया नाड्याः शिखरप्रदेशे विसर्गशक्त्या अधस्स्थाने अकारादिक्षान्तपंचाशदक्षरसंशोभितदलं परमानन्दस्वरूप मधोमुखं सहस्रदलपद्मं विलसतीतिभावार्थः (शोभा वृ०) ॥ १ ॥

समास्तइति—तत्रान्तः सहस्रदलपद्मस्य मध्ये शशपरिरहितः कलङ्कविहीनः शुद्धसम्पूर्णचन्द्रः निर्म्मलपूर्णचन्द्रः समास्ते सम्यक्तिष्ठति । की० स्फुरज्ज्योत्स्नाजालः स्फुरन् विलसन् ज्योत्स्नाजालः चन्द्रिकासमूहो यस्य तादृशः । पुनः की०, परमरसचयः परमोयोरसः अमृतं तस्यचयः समूहस्तेन स्निग्धसन्तानहासः स्निग्धं सान्द्रं क्लिन्नमिति यावत् सन्तानं विस्तृतिः तदेव हासः प्रकाशो यस्य ता० । तस्यान्तः चन्द्रस्यान्तरदेशे त्रिकोणं त्रिकोणाकारशक्तिः सततं निरन्तरं स्फुरति दीप्यते । की० त्रिकोणं विद्युदाकाररूपं विद्युत्स्वरूपम् । तदन्तः तस्य त्रिकोणस्यमध्ये तत् प्रसिद्धं शून्यं निराकारं चिन्तयेत् ध्यायेत् । की० सकलसुरगुरुं सर्वदेवश्रेष्ठम् । पुनः की०, अतिगुह्यं अतिशयगोपनीयम् ॥ उक्तचक्रस्यान्तर्वर्तमानस्य निष्कलङ्कस्य पूर्णचन्द्रस्यान्तरे चपलावत्स्फुरत्स्वरूपे त्रिकोणे सकलसुरपूज्य मतिगोप्यं शून्य मा-

स्ते । मुमुक्षुभि स्तदेवचिन्तनीयमिति भावार्थः (शोभा वृ०) ॥२॥

सुगोप्यमिति—(गुप्तं) तत् शून्यं यत्नात् प्रयासात् सुगोप्यं सुष्ठुप्रकारेण गोपनीयम् । की०, अतिशयपरमामोदसन्तानराशेः अतिशयोऽत्यन्तो यः परमामोदसन्तानः परमहर्षसन्ततिः तस्य यो राशिः समूहः तस्य परं केवलं कन्दं मूलकारणम् । पुनः की०, सूक्ष्मं दृष्ट्यगोचरम् । पुनः की०, शशिसकलकलाशुद्धरूपप्रकाशं शशिनश्चन्द्रस्य या सकलकला षोड़शकला तद्वत् शुद्धः निर्म्मलः रूपप्रकाशः आकारकान्तिर्यस्य तादृशम् । पूर्णचन्द्रप्रकाशमित्यर्थः । इहस्थाने अस्मिन् शून्यस्थाने देवः ईश्वरः निरवधि निरन्तरं सुधाधारासारम् अमृतधारवृष्टिम् अतितरां अतिशयेन विमुञ्चन् त्यजन् निर्म्मलमतेः शुद्धबुद्धे यँते योगिन आत्मज्ञानं ब्रह्मज्ञानं दिशति ददाति । की० देवः परमशिवसमाख्यानसिद्धप्रसिद्धिः । परममुत्कृष्टं यत् शिवसमाख्यानं शिवेति नाम तेन सिद्धेषु सिद्धगणेषु प्रसिद्धिः ख्यातिर्यस्य तादृशः । पुनः की०, खरूपी आकाशस्वरूपः । पुनः की०, सर्व्वात्मा सर्व्वेषामन्तरात्मा । पुनः की०, रसविसरभितः रसः शिवशक्तियोगानन्दरसः तस्य विसरः ज्ञानं तम् इतः प्राप्तः । परमरसमय इत्यर्थः । पुनः की०, अज्ञानमोहान्धहंसः अज्ञानमोहः अतिशयाज्ञानं स एवयो ऽन्धकारः तस्य हंसः सूर्य्यः अज्ञाननाशक इत्यर्थः । यथा सूर्य्योऽन्धकारं नाशयति तथैव अयमपि जीवानां अज्ञानरूपान्धकारं नाशयतीत्यर्थः ॥३॥

सुधेति—(पूर्वश्लोकेनानुषङ्गः) परमइति नाम्ना परिचितः परमइति संज्ञया परिचितः प्रसिद्धः हंसः परब्रह्म परमहंस इति यावत् । परमशिव इत्यर्थः समास्ते सम्यक्तिष्ठति । कीदृशः सर्व्वेशः सर्व्वेषां भूतानामीशः स्वामी, सृष्टिस्थितिसंहारकारकत्वात् । पुनः की०, सकलसुखसन्तानलहरीपरिवाहः सकलसुखसन्तानः सर्वसुखराशिः तस्यलहरी तरङ्गः तस्याः परिवाह आश्रयो जलप्लावनम् वा । अखिलानन्दमय इत्यर्थः ॥४॥ परमानन्दकन्देऽतियत्नाद्गोपनीये पूर्वोक्तशून्यस्थाने स्वच्छमते योगिन आत्मज्ञानं जनयन् सततंसुधाधारं विमुञ्चन्नज्ञानतिमिरनाशकः परमहंसनाम्ना प्रसिद्धः परमशिव, आस्त इतिभावार्थः (शिखरिणी वृत्तम्) ॥ ३, ४.॥

शिवस्थानमिति—शैवा शिवसेवकाजना एतत् सहस्रारं पद्मं शिवस्थानं महेश्वरस्थानम् । वैष्णवगणाः विष्णुभक्तवर्गाः परमपुरुषं परमः सर्वोत्कृष्टः पुरुषः सांख्योक्तपरमेश्वरो यत्र तादृशम् नारायण स्थानमित्यर्थः । केचिदपरे अन्येकेचिज्जना प्रायो बाहुल्येन हरिहरपदं हरिहरस्थानम् । देवीचरणयुगलानन्दरसिका देव्या भगवत्याः पादद्वयस्य य आनन्दः सुखं तस्य रसिका अनुरागिनः प्रेमिण इतियावत् पदंदेव्या भगवत्यास्स्थानं मुनीन्द्रा अप्यन्ये । अन्येऽपरेऽपिमुनीन्द्रा योगिश्रेष्ठाजना अमलं निर्म्मलं प्रकृतिपुरुषस्थानं मायाब्रह्मस्थानमिति लपन्ति कथयन्ति । ये साधकाः यद्यद्देवभक्ताः नैव्रेतत्सहस्रदलपद्मं तत्तद्देवस्थानं कथयन्तीतिभावः ॥ शैवादयोदेवभक्ताः पूर्ववर्णितं तदेव शून्यस्थानं स्वस्वेष्टदेवस्थानमेव कथयन्तीतिभावार्थः (शिखरिणी वृ०) ॥५॥

इहस्थानमिति—नरवरः नरश्रेष्ठ इहस्थानम् एतत्सहस्रदलपद्मं ज्ञात्वा बुध्वा अर्थादेतत्कमलं स्वकीयेष्टदेवस्थानं विज्ञाय नियतनिजचित्तः नियतं वशीकृतं निजचित्तं येन तादृशः वशीकृतस्वमनस्कः सन् संसारे जन्ममरणात्मकसंसृतौ च पुनः त्रिभुवने स्वर्गमर्त्त्यपाताले कचिदपि कुत्रचिदपिदेशे बद्धः संयतः नभूयात् अर्थात् तस्य न पुनर्जन्मेतिभावः । नियममनसः नियमे ईश्वरार्चनायां मनो यस्य तादृशस्य तस्यकृतिनः पुण्यात्मनो जनस्य सदा सर्व्वदा कर्त्तुं सृष्टिपालने विधातुं हर्तुं संहारंकर्तुं समग्रा सम्पूर्णा शक्तिः सामर्थ्यं स्यात् भवेदीत्यर्थः । अपि पुनः तस्य जनस्य खगतिः खेचरी सिद्धिः सुविमला संस्कृता वाणीच वाक्च स्यात् भवेत् ॥ वशी प्रयतो मानवेन्द्रस्तच्छून्यस्थानमेव निजदेवस्थानं विज्ञाय जन्मादिक्लेशविमुक्तः सन् समग्रां शक्तिं लभत इतिभावार्थः (शिखरिणी वृ०) ॥६॥

अत्रास्तइति—अत्र अस्मिन् सहस्रदलान्तर्गतत्रिकोणे सा प्रसिद्धा अनानाम्नी चन्द्रस्य हिमकरस्य षोड़शी षोड़शांसभूता शिशुसूर्य्यसोदरकला प्रातःकालीनसूर्य्यस्य सोदरा सदृशी या कला रक्तवर्णा इत्यर्थः सा आस्ते तिष्ठति । कीदृशी शुद्धा निर्म्मला निर्व्विकारेतियावत् पुनः की०, नीरजेति । नीरजस्य पद्मस्य सूक्ष्मतन्तोः मृणालसूत्रस्य शतधाभागानां शतसंख्यकखण्डानाम् एकरूपा एकखण्डसदृशसूक्ष्माकारा । पुनः की०, परा श्रेष्ठा । पुनः की०, विद्युद्दामसमानकोमलतनुः विद्युद्दाम्नो विद्युच्छ्रेण्याः समाना सदृशी कोमलास्निग्धा तनुः शरीरं यस्यास्तादृशी । पुनः की०, नित्योदिता सततप्रादुर्भूता तस्यक्षयोदययोरभावात् । नित्यप्रकाशवतीत्यर्थः । पुनः की०, अधोमुखी अधोवदना । पुनः की०, पूर्णानन्देति पूर्णानन्दस्य परम्परायाः अखिलानन्दस्य श्रेण्या अतिविगलन्ती निःसरन्ती या पीयूषधारा अमृतस्रुतिः तस्या धरा धात्री तद्धारणकर्त्रीत्यर्थः ॥ अस्मिन्नेव शून्यस्थानेऽतिसूक्ष्ममृणालसूत्रशततमांशरूपा चपलामालास्निग्धाङ्गी ब्रह्मस्थानात्स्रवदमृतधारावहा निरन्तरोद्गताऽधोवदना बालसूर्य्यसमा अनानाम्नीविधोः षोड़शीकला वर्त्तत इतिभावः (शार्द्दूल विक्रीडित वृ०) ॥७॥

निर्व्वाणेति—तदन्तर्गता तस्या अनानाम्न्याः कलाया अन्तर्गता मध्यस्थिता सा प्रसिद्धा कला निर्व्वाणनाम्नी कला रेखा आस्ते तिष्ठति । कीदृशी परात्परतरा उत्कृष्टादप्युत्कृष्टतरा सर्वश्रेष्ठेत्यर्थः । पुनः की०, केशाग्रस्य सहस्रधाविभजितस्य सहस्रांशीकृतस्य केशाग्रस्य कचाग्रस्य एकांशरूपा एकभागसदृशाकारा अतिशयसूक्ष्मेतियावत् तादृशी सती विद्यमाना । पुनः की०, भूतानामधिदैवतं प्राणिनामिष्टदेवतास्वरूपा । दैवतमित्यस्य अजहल्लिङ्गत्वात् क्लीवत्वम् । पुनः की०, भगवती षडैश्वर्य्यादियुक्ता । पुनः की०, नित्यप्रबोधोदया नित्यप्रबोधस्य नित्यज्ञानस्य उदयो यस्यास्तादृशी । पुनः की०, चन्द्रार्द्धाङ्गसमानभंगुरवती बालविधुसदृशकुटिलाकारा । पुनः की०, सर्व्वार्कतुल्यप्रभा द्वादश सूर्य्यसदृशदीप्तिमतीत्यर्थः ॥ पूर्वोक्ताया अनानाम्न्याः कलायाअन्तर्गता केशाग्रसहस्रतमांशसूक्ष्मा चन्द्रार्धसमकुटिला द्वादशादित्यवत्प्रकाशमाना भूतानामधिदेवता ज्ञानरूपा निर्वाणाभिधया कला समास्त इतिभावार्थः (शार्द्दूल वि० वृ०) ॥८॥

* अत्रार्द्धशब्दः खण्डवाचको नतु समांशवाचकः । अन्यथा अर्द्धचन्द्र इतिस्यात् ।

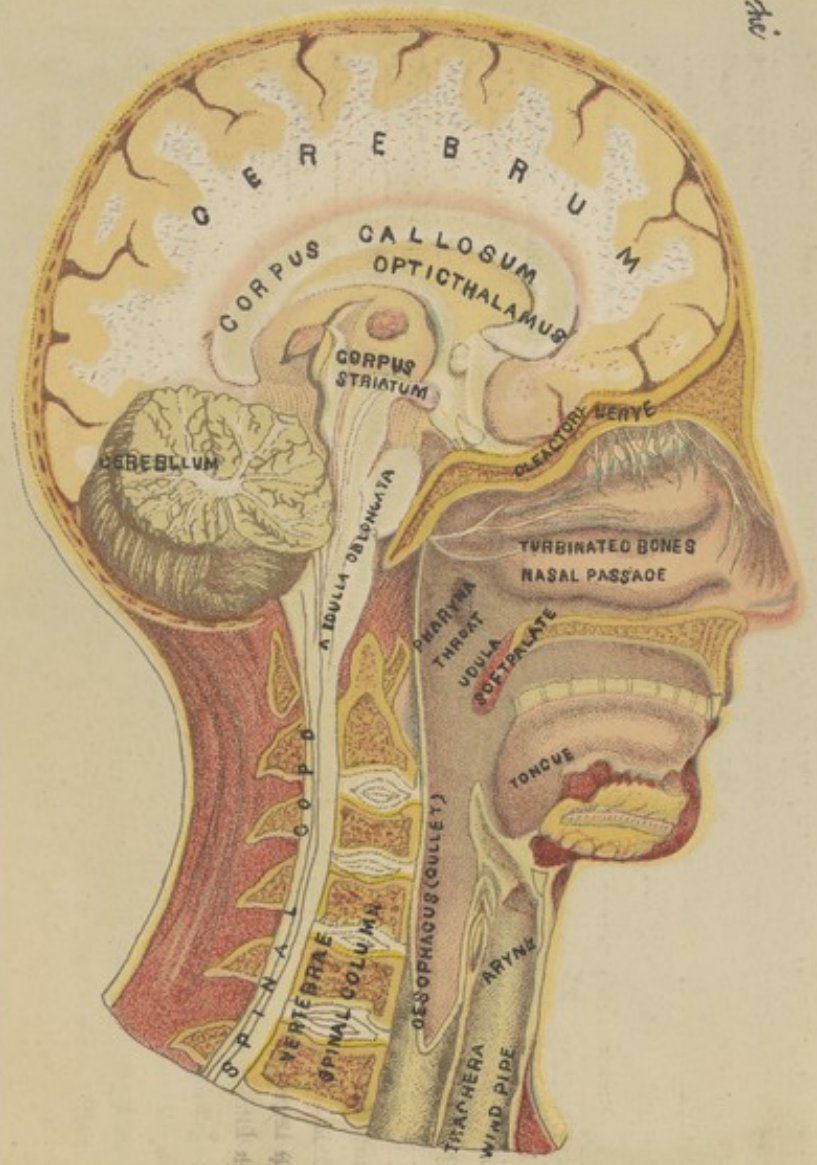

अनाटमीसे मस्तिष्कके भिन्न स्थान स्पष्टरुपसे देखलाये जाते है.

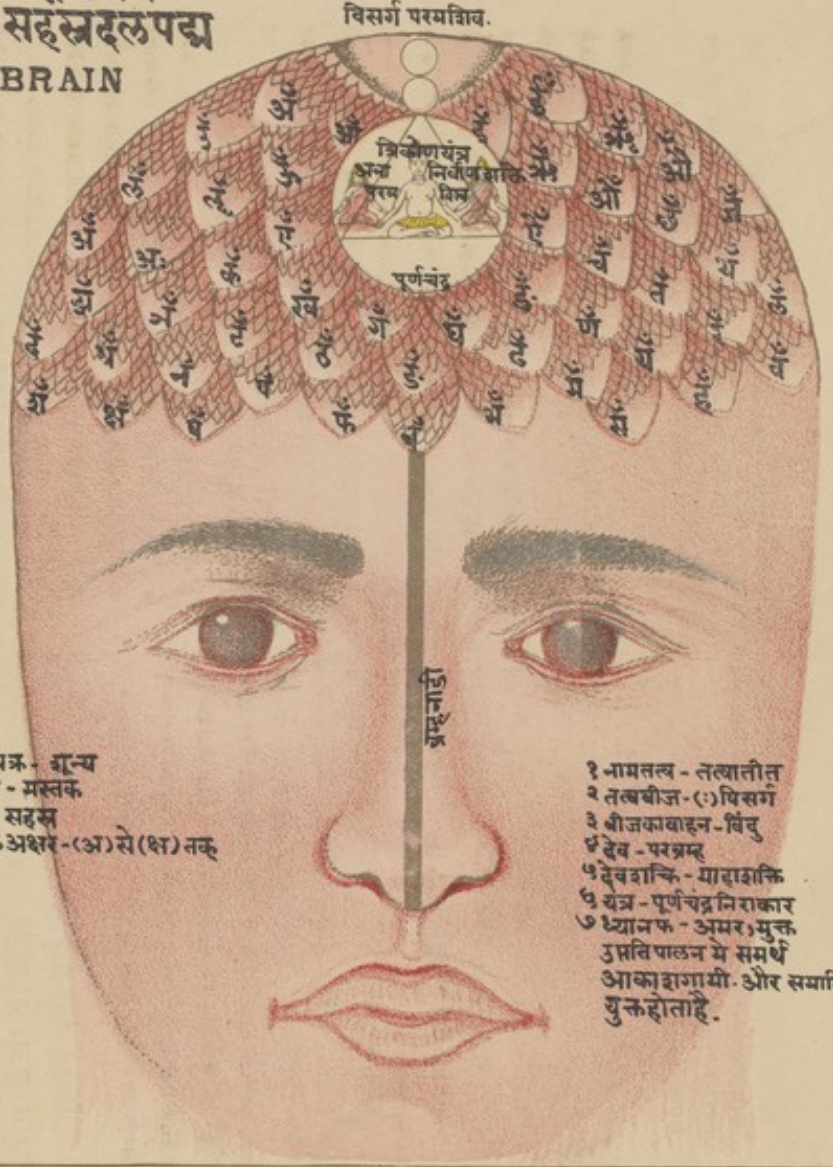

नंबर ७
शून्यचक्र
सहस्रदलपद्म
BRAIN

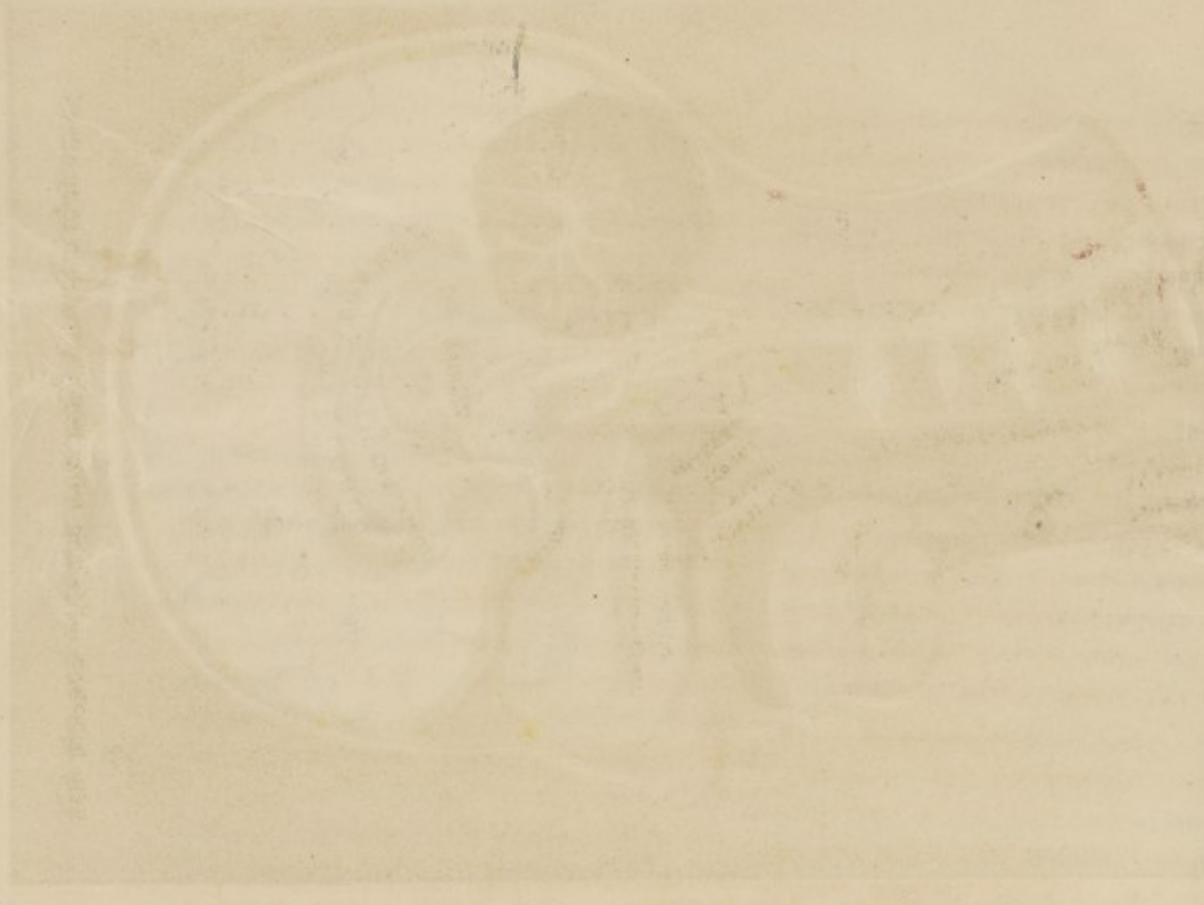

एतस्याइति—एतस्या निर्व्वाणाख्यकलाया **मध्यदेशे सा** प्रसिद्धा परमा उत्कृष्टा **अपूर्वनिर्व्वाणशक्तिः** विलक्षणनिर्व्वाणाख्य शक्ति विलसति विलासं करोति । कीदृशी **कोट्यादित्यप्रकाशा** कोट्यादित्यानां कोटिसंख्यकसूर्य्याणां प्रकाशइव प्रकाशो यस्यास्तादृशी । पुनः की०, **त्रिभुवनजननी** स्वर्गमर्त्यपातालानां प्रसविनी तज्जननकर्त्रीत्यर्थः । पुनः की०, **केशाग्रस्य** कचाग्रस्य **कोटिभागैकरूपा** कोट्यंशाना मेकरूपा एकांशरूपा अतिशयसूक्ष्मेतियावत् । पुनः की०, **अतिगुह्या** अत्यन्तगोपनीया सर्वेभ्योऽनिवेदनीयेतियावत् । पुनः की०, **निरवधीति** निरवधि निर्म्मर्य्यादं प्रतिक्षणमित्यर्थः । विलसन्ती शोभमाना या प्रेमधारा स्नेहपरम्परा तस्या **धरा** धात्री । निरवधिविलसन्ती चासौ प्रेमधाराधरेतिकर्म्मधारयः । पुनः की०, **सर्वेषां** सकलप्राणिनां **जीवभूता** प्राणात्मिका । पुनः की०, मुनिमनसि योगिजनचित्ते **मुदा** हर्षेण तत्त्वबोधं ब्रह्मज्ञानं **वहन्ती** प्रापयन्ती मननशीलानां तत्त्वज्ञानस्य जनिकेत्यर्थः ॥ **पूर्वोक्ताया निर्वाणकलाया-** मध्ये कोटिसूर्य्यसमप्रकाशिका **त्रिभुवनप्रसविनी केशस्यकोटितमांश** सूक्ष्मरूपाऽतिगोपनीया प्राणिनां जीवरूपा **निर्वाणशक्ति यतीनां** ब्रह्मज्ञानं जनयन्ती सती विलसतीति भावार्थः (स्रग्धरा वृ०) ॥ ९ ॥

तस्या इति—तस्या निर्व्वाणशक्त्या मध्यान्तराले मध्यभागे अमलं निर्म्मलं शिवपदं शिवस्थानमस्तीतिशेषः कीदृशं **शाश्वतं** नित्यम् । पुनः की०, **योगिगम्यं** योगिभिः योगाभ्यासिभिः गम्यं प्राप्यं योगिभिर्ज्ञेयमित्यर्थः । पुनः की०, **नित्यानन्दाभिधानं** नित्यानन्दः सदानन्द इत्यभिधानं नाम यस्यतादृशम् । पुनः की०, **परमकुलपदं** परमशक्तिस्थानम् । पुनः की०, **शुद्धबोधप्रकाशं** शुद्धबोधस्य निर्म्मलज्ञानस्य प्रकाशो यस्मात् तादृशम् । **केचित्** कतिपये **अतिसुधियः** अतिविद्वांसः **वैष्णवाः** विष्णुभक्ताः **परम्** उत्कृष्टं **तत्** पूर्वोक्तस्थानं **ब्रह्माभिधानं** ब्रह्मसंज्ञकं ब्रह्मस्थानमिति यावत् **लपन्ति** कथयन्ति । अन्ये **केचित्** कतिपये **सुकृतिनः** विद्वांसः **किमपि** अनिर्वचनीयम् एतत्पूर्वोक्तस्थानं **हंसाख्यं** हंसनामकं हंसस्थानमितियावत् लपन्ति कथयन्ति । केचित् **मोक्षवर्त्मप्रकाशं** मोक्षवर्गे मुक्तिमार्गस्तत् प्रकाशयति उज्ज्वलयतीति तादृशम्, मुक्तिमार्गदर्शकं वदन्तीत्यर्थः ॥ **निर्व्वाणाख्यशक्त्यन्तराले नैरन्तरं नित्यानन्दनामकं परमशक्तिपदं निर्म्मलम् स्वच्छमतिजनकम् शिवस्थानं विद्यते । वैष्णवास्तद्देवस्थानं ब्रह्मपदं कतिपये धर्म्मिष्ठा मुक्तिमार्गदर्शकस्थानम्, अन्येसुकृतिनो हंसस्थानं निगदन्तीतिभावार्थः** (स्रग्धरा वृत्तम्) ॥१०॥

॥ भाषाटीका ॥

उक्त आज्ञाख्यचक्रसे ऊपर **शङ्खिनी** * नामकी नाड़ीके शिखरपर शून्य देशस्थित अर्थात् ब्रह्माण्डमें फैलाहुआ विसर्गनाम शक्तिके नीचे, अत्यन्त सुन्दर प्रकाशमान पूर्णमासीके चन्द्र समान शुभ्र एक **सहस्रदल कमलहै** जो अधोमुखी † अर्थात् नीचे मुंहहै । औ प्रातःकालीन बालरवि की किरणोंके समान अत्यन्त प्रकाशमान रक्तवर्ण केशर जिसमें शोभायमान होरहेहैं । फिर वर्णमाला के अकारादि पचासों अक्षर (अ)से (क्ष) तक इस कमलकी पत्तियों पर वर्तमान हैं अर्थात् इस कमलकी बीस २ पत्तियां एक एक अक्षरसे मथितहैं, फिर यह कमल नित्यानन्द स्वरूपही है ।१।

उक्त सहस्रदलपद्मके बीच अमृतरसमय सुहावनी किरणोंसे सुशोभित निष्कलङ्क **पूर्णचन्द्र**, दशो दिशामें अपनी सुन्दर ज्योति फैलातेहुए बिलास कररहा है । इसी चन्द्रमण्डलके मध्य विद्युतसमान दमकताहुआ **त्रिकोण** यन्त्र है, इस यन्त्रके बीच सब देवतोंके गुरुदेव **शून्यब्रह्मको** अत्यन्त गोपनीयरूपसे चिन्ता करनीचाहिये ॥ २ ॥

उक्त शून्यब्रह्मको, जो अतिसूक्ष्म परमानन्दकन्द अत्यन्त श्रेष्ठ सोलहों कलासे सुशोभित पूर्णचन्द्र सदृश प्रकाशमानहै, अत्यन्त यत्नसे गोपनीय रखना चाहिये। फिर इसी स्थानमें 'ख' अर्थात् आकाशरूपी देव परमात्मा **परमशिव** नाम करके सिद्धोंमें परम प्रसिद्ध, सदा अमृतधाराकी वृष्टि करतेहुए, शुद्धबुद्धि योगियोंको आत्मज्ञान दान देतेहुए, सर्वान्तरात्मा, शिव शक्तियोगानन्दरसमय, निवासकरतेहैं जो अज्ञानतारूपी अन्धकारको हंस अर्थात् सूर्य्य समान नाशकरनेमें सामर्थ हैं । फिर इसी स्थानमें सबके ईश्वर सकल सुखसागर अखिलानन्दमय **परमहंस** नाम भगवान् निवास करतेहैं ॥ ३, ४ ॥

इसी शून्यस्थानको शैव शिवस्थान, वैष्णव विष्णुस्थान, अनेक भक्तजन हरिहरस्थान, देवीचरणसेवाकरनेवाले शक्तिस्थान, और अनेक मुनिगन प्रकृतिपुरुषका स्थान, वर्णनकरतेहैं अर्थात् इस स्थानको सब अपने २ इष्टदेवका स्थान जानतेहैं । तात्पर्य्य यह कि अपनी २ इच्छानुसार सब उपासक अपने २ उपास्यको इसी स्थानमें ध्यानकर जगदीश्वरमें लय होजासकतेहैं ॥ ५ ॥

जो पुण्यात्मा प्राणी इस सहस्रदलके इस शून्य स्थानको अपने इष्ट देवका निवास जानकर निश्चयकर स्थिरचित्त हो उस पूर्णब्रह्म जगदीश्वर में ध्यानलगा मग्नहोवे, वह श्रेष्ठ योगी, स्वर्ग मर्त्य पाताल तीनों लोकोंमें कहीं भी बद्ध नहीं होसकता अर्थात् फिर जन्म मरणके बन्धनमें नहीं आता, वरु सदा सृष्टि, पालन औ संहारमें ब्रह्मादि देवताके समान समर्थ होजाता है, और आकाशमें गमन करनेकी शक्ति भी उसे प्राप्त होतीहै, अर्थात् उसकी खेचरीमुद्रा भी सिद्ध होजातीहै और गद्यपद्य सहित स्वच्छ काव्य करनेमें प्रवीण होजाताहै ॥ ६ ॥

इसी स्थान अर्थात् त्रिकोणमें प्रातःकालीन बालसूर्य्यकी कला ऐसी रक्तवर्ण विजलीसी चमकीली अत्यन्त निर्म्मल कमलनालके सूत्रके सौ भागमें एक भागके समान पतली, अत्यन्त श्रेष्ठा, नित्य प्रकाशमाना अधोमुखी परम आनन्दकी देनेवाली पूर्णचन्द्रके सोलहवें कलाके समान सूक्ष्मा अमृतधारा धारणकिये **अमा** नामकी शक्ति उदित होरहीहै ।७।

फिर उक्त **अमा** नाम शक्तिके मध्य द्वादश सूर्य्यके समान प्रकाशमाना परात्परा अर्थात् अत्यन्त श्रेष्ठा, नित्यज्ञानकी देनेवाली भगवती एक केश के सहस्र अंशमें एक अंशके समान अतिशय सूक्ष्मा, सब प्राणियोंकी इष्टदेवतारूप, षड़ैश्वर्य्ययुक्त बालविधु समान कुटिलाकारा निर्व्वाण नामकी

* शंखिनी नाड़ी मूलद्वारमें स्थितहै तहांसे सीधी ब्रह्माण्डतक चलीगईहै उसीके शिखर पर सहस्रदल वर्तमानहै ।

† यह सहस्रदल और पूर्व कथन कियाहुआ चतुर्दल दोनों अधोमुखी अर्थात् नीचे मुंह खिलेहुए हैं और सब कमल ऊर्ध्वमुख अर्थात् ऊपर मुंह हैं ।

एक कला * निवासकरती है ॥८॥

पूर्वोक्त **निर्व्वाणरुद्र** कलाके मध्य कोटि सूर्य्य समान प्रकाशमाना, तीनों भुवनकी रचना करनेवाली, केशाग्रके कोटिभागमें एक भागके समान अत्यन्त सूक्ष्मा, अति गुह्या अर्थात् गोपनीया, सततकाल प्रेमधारा धारण किये, सब प्राणियोंकी प्राणरूप, मुनियोंको आनन्द देनेवाली और नित्य तत्त्वज्ञानकी प्राप्ति करानेवाली, **निर्व्वाणशक्ति** निवासकरती है ॥९॥

उक्त **निर्व्वाणशक्ति** के मध्यभागमें निर्म्मल सनातन योगियोंको ध्यान द्वारा जानने योग्य, शुद्धज्ञानप्रकाशक, सर्वशक्तिमय, नित्यानन्द नामक परमशक्तियुक्त **शिवस्थान** अर्थात् **तुरीयस्थान** है, इसी स्थानको कोई २ बुद्धिमान वैष्णव **परमज्योतिस्थान** अर्थात् ब्रह्मस्थान, कोई हंसका स्थान और कोई २ पुण्यात्मा **मोक्षद्वार** अर्थात् गोक्षका मार्ग बताता है ॥१०॥ इति ॥

* इसीको महाकुण्डलिनी भी कथन करते हैं और इसी कलाकी भावना करनेसे तत्त्वज्ञानकी प्राप्ति होती है ।

यहांतक सातों कमलोंका वर्णन होचुका अब आगे कुण्डलिनीके उत्थापनका क्रम कथन करेंगे । साधकोंको चाहिये कि ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यं, इन सातों व्याहृतियोंसे सातों कमलोंका ध्यान करतेहुए सहस्रदलमें पहुंच कुम्भक कर अर्थात् मन अथवा प्राण* को रोक गायत्री मन्त्र (**तत्सवितुर्वरेण्यम्**) जपतेहुए अपने इष्टदेवमें मग्न होजावें, जब फिर कुम्भकसे उतरना चाहें तो "**आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम्**" इस शीर्ष मन्त्रसे मनोवृत्तिको अथवा वायुको उतारलेवें, उतरनेके समय इष्टदेवके मस्तकसे चरणतक का ध्यान करें, अथवा ऊपरसे नीचे कमलोंका ध्यान करते आवें, अथवा आप (जल) ज्योति (प्रकाश) रसोऽमृतं, ब्रह्म, भूः, भुवः, स्वः, इनहीं सातोंका ध्यान कर ॐकारमें समाप्त करें ॥

* मानस प्राणायाममें केवल मनही रोका जाता है मन रुकनेसे प्राण भी आपसे आप रुकजाता है ।

अथ कुलकुण्डलिन्युत्थापनक्रमः

हूंकारेणैव देवीं यमनियमसमाभ्यासशीलः सुशीलो ज्ञात्वाश्रीनाथवक्त्रात्क्रममपिच महामोक्षवर्त्म प्रकाशम् ॥ ब्रह्मद्वारस्य मध्ये विरचयतुतरां शुद्धबुद्धिप्रभावो भित्त्वा तल्लिङ्गरूपं पवनदहनयोराक्रमेणैव तस्माम् ॥१॥ भित्त्वा लिङ्गत्रयं तत्परमरसशिवे सूक्ष्ममार्गे प्रदीप्ते सा देवी शुद्धसत्ता तडिदिव विलसत्तन्तुरूपस्वरूपा ॥ ब्रह्माख्यायाः शिरायाः सकल सरसिजं प्राप्य देदीप्यते तत् मोक्षानन्दस्वरूपं घटयति सह सा सूक्ष्मतालक्षणेन ॥२॥ नीत्वा तां कुलकुण्डलीं नवरसां जीवेन सार्द्धं सुधीः मोक्षे धामनि शुद्धपद्मसदने शैवे परे स्वामिनीम् ॥ ध्यायेदिष्टफलप्रदां भगवतीं चैतन्यरूपां परां योगीशो गुरुपादपद्मयुगलालम्बी समाधौ युतः ॥३॥ लाक्षाभं परमामृतं परशिवात् पीत्वाततः कुण्डली पूर्णानन्द महोदयात् कुलपथान्मूले विशेत् सुन्दरी ॥ तद्दिव्यामृतधारया स्थिरमतिः सन्तर्प्पयेद्देवतं योगी योग परम्पराविदितया ब्रह्माण्डभाण्डस्थितम् ॥४॥ ज्ञात्वैतत्क्रममुत्तमं यतमना योगी समाधौ युतः श्रीदाक्षागुरुपादपद्मयुगलामोदप्रवाहोदयात् ॥ संसारे न जनिष्यते नहि कदा संक्षीयते संक्षये पूर्णानन्दपरम्परा प्रमुदितः शान्तः सतामग्रणीः ॥५॥ योऽधीते निशिसन्ध्ययोरथदिवा योगीस्वभावस्थितो मोक्षज्ञान निदान मेतममलं शुद्धं सुशुद्धं क्रमम् ॥ श्रीमच्छी गुरुपादपद्मयुगलालम्बी यतान्तर्म्मना स्तस्यावश्यमभीष्टदैवतपदे चेतो नरीनृत्यते ॥६॥

॥ भाष्यम् ॥

हूंकारेणेति—सुशीलः सुसद्वृतः **यमनियमसमाभ्यासशीलः** यमनियमाद्यष्टाङ्गयोगानुशीलनपरोयोगी **श्रीनाथवक्त्रात्** गुरुदेव मुखात् स्वयम्भूलिङ्गोपरिस्थितां कुण्डलिनीं च पुनः **क्रमम्** उत्कषट्चक्राणां वेधनादिरीतिमपि ज्ञात्वा बुध्वा एतद्द्वयंविज्ञायेतियावत् **शुद्धबुद्धिप्रभावः** निर्म्मलज्ञानयुक्तः सन् तत् प्रसिद्धं लिङ्गरूपं स्वयम्भूलिङ्गं **भित्त्वा** छित्त्वा अर्थात् कुण्डलिन्या विदार्य्य तन्मार्गेण **हूंकारेणैव** (हूं) इति शब्दोच्चारणेनैव तां कुण्डलिनीं **ब्रह्मद्वारस्य** मूलाधारपद्मस्य मध्ये **विरचयतुतरां** प्रकर्षेण नयतु । तां कीदृशीं **पवनदहनयो** रनिलानलयोः **आक्रमेणैव** आक्रान्त्यैव **तस्मां** प्रबुद्धां त्यक्तशयानामित्यर्थः । तथाच गोरक्षसंहितायाम् (मुखेनाच्छाद्यतद्द्वारं सुषुप्ता परमेश्वरी । प्रबुद्धा वह्नियोगेन मनसा मरुतासह) । कर्मं कीदृशं **महामोक्षवर्त्मप्रकाशं** महामोक्षवर्त्मनो निर्व्वाणमार्गस्य प्रकाशो यस्मात्तादृक्षम् ॥ **यमनियमानुष्ठानपरः सुशीलो यतिजनो गुरुमुखात् महामुक्तिमार्गज्ञापकं कुण्डलन्युत्थापनक्रमं**

नंबर ८
षट्चक्रमूर्तिः

सिद्धासनम्

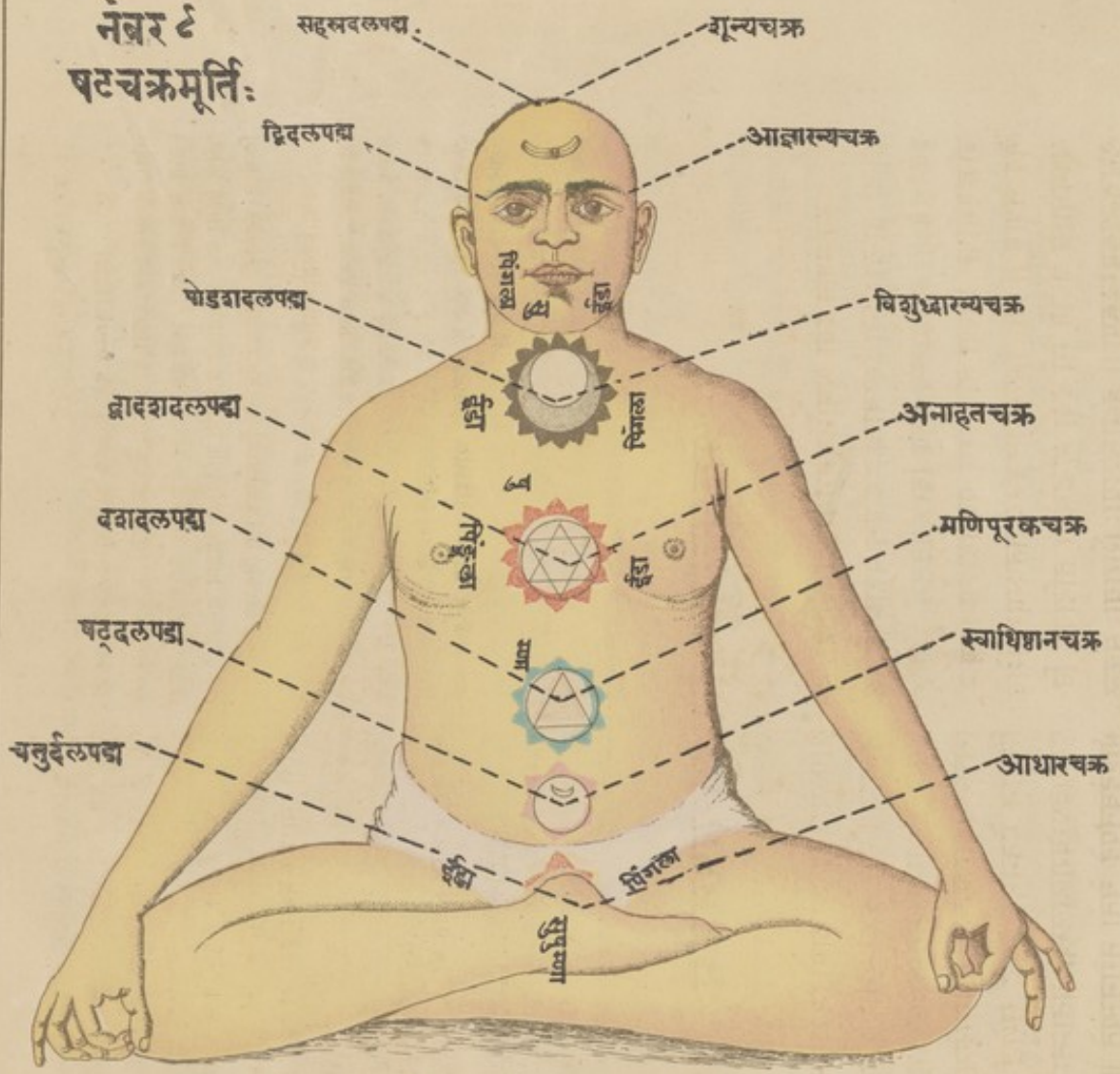

अनाटमीसेपूर्ण
शरीर के चक्रों औ-
नाड़ियों को स्पष्टकर-
देखलाया जाता है-

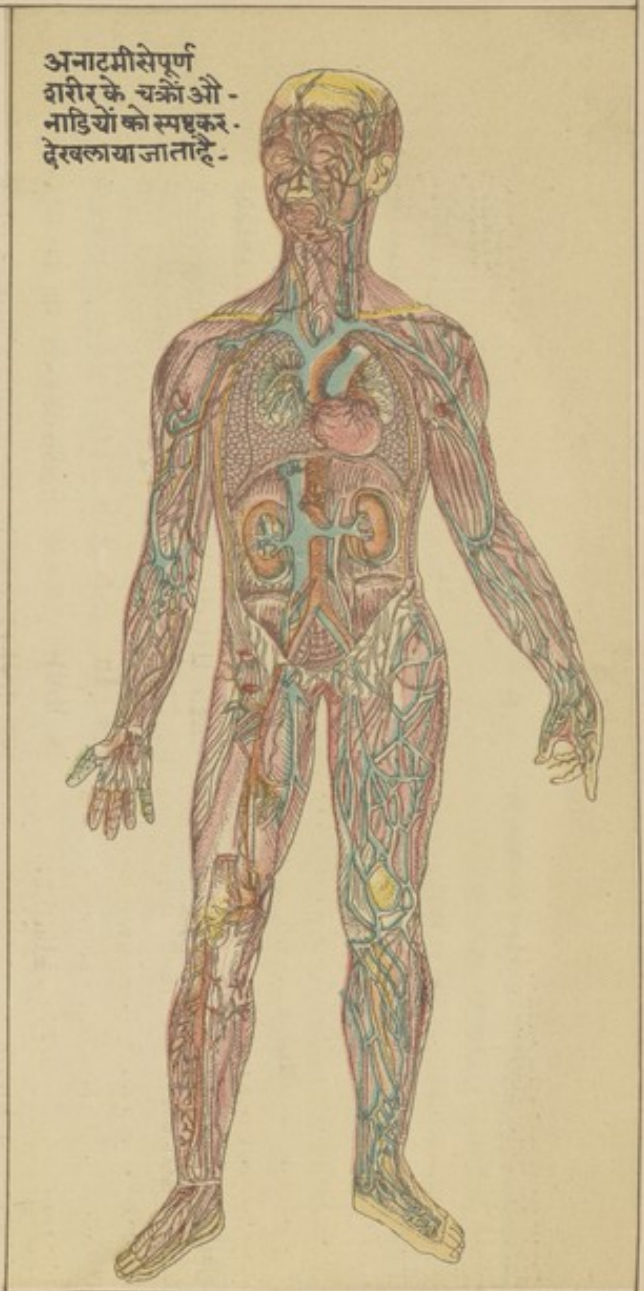

षट्चक्राणां वेधनादिरीतिमपि विज्ञाय पवनानलयोराक्रान्त्या तप्ताम् अर्थात् त्यक्तशयनां कुण्डलिनीं हूंशब्दोच्चारणेनैव स्वयम्भूलिङ्गं विदार्य्य ब्रह्मद्वारस्यान्त नेयतुतराम् (स्रग्धरा वृ०) ॥१॥

भित्त्वेति—सा प्रसिद्धा देवी कुलकुण्डलिनी ब्रह्माख्यायाः शिराया ब्रह्मनाड्याः सकाशात् तत् पूर्वोक्तं लिङ्गत्रयं मूलाधारस्थं स्वयम्भूलिङ्गं, हृत्पद्मस्थं वाणाख्यलिङ्गम्, आज्ञाचक्रकर्णिकामध्यस्थमितराख्य लिङ्गमितिलिङ्गत्रयं, भित्त्वा छित्त्वा तत् पूर्वोक्तं सकलसरसिजम् अखिलपद्मं प्राप्य षट्पद्मकर्णिकान्तर्गतासतीत्यर्थः प्रदीप्ते प्रज्वलिते परमरसशिवे परमरसः परमानन्दमयः शिवः महादेवो यत्र तादृशे सूक्ष्मधाम्नि अत्यल्पस्थाने ब्रह्मरन्ध्रइत्यर्थः देदीप्यते अतिशयेन प्रज्वलति। सा देवी कीदृशी शुद्धसत्त्वा शुद्धा निर्म्मला सत्ता स्थितिर्यस्यास्तादृशी नित्येत्यर्थः। पुनः की०, तडिदिव विद्युदिव विलसन्तन्तुरूपस्वरूपा विलसत् विलासं कुर्वत् शोभमानमित्यर्थः तन्तुरूपं सूत्राकारं स्वरूपं यस्यास्तादृशी विद्युदिव देदिप्यमानसूक्ष्मस्वरूपेत्यर्थः। सा कुण्डलिनी देवी सूक्ष्मता लक्षणेनसह सूक्ष्मताधर्म्मेण सह मोक्षानन्दस्वरूपं परमानन्दस्वरूपं शिवमित्यर्थः घटयति प्राप्नोति सा कुलकुण्डलिनी स्वयं सूक्ष्माभवती सूक्ष्मधामस्थं परमशिवमुपतिष्ठतइत्यर्थः ॥ सा कुलकुण्डलिनी देवी स्वयं सूक्ष्मशरीरतां प्राप्य ब्रह्मनाडीद्वारा षट्पद्मकर्णिकारन्ध्रमार्गेण स्वयम्भू वाणाख्येतराख्यलिङ्गत्रयं भित्त्वा सूक्ष्मधाम्नि ब्रह्मरन्ध्रे सूक्ष्मरूप परमशिवेनसह सङ्गता सती देदीप्यत इतिभावार्थः (स्रग्धरा वृ०) ।२।

नीत्वेति—सुधीः प्राज्ञः योगीशः योगिश्रेष्ठोजनः तां प्रसिद्धां कुलकुण्डलिनीं जीवेनसार्द्धं जीवात्मनासह मोक्षे मोक्षदायके धाम्नि स्थाने शुद्धपद्मसदने सहस्रदलपद्मस्वरूपगृहे नीत्वा प्रापय्य इष्टफलप्रदाम् अभिमतफलदात्रीं परां श्रेष्ठां चैतन्यरूपां ज्ञानात्मिकां भगवतीं षडैश्वर्य्ययुक्तां स्वामिनीं सहस्रदलपद्माधिष्ठात्रीं महाकुण्डलिनीं ध्यायेत् चिन्तयेत् कीदृशीं कुण्डलिनीं नवरसां नूतनरसयुक्तां नवीनछवियुक्तामित्यर्थः। यद्वा शृंगारहास्यादिनवरसजनिकां, काव्यशक्तिदातृत्वात्। कीदृशे धामनि शुद्धपद्मसदने शुद्धपद्मं निर्म्मलसरसिजं सहस्रदलपद्ममितियावत् सदनंगृहं यस्यतादृशे सहस्रदलपद्मकर्णिकान्तरवर्तिनीत्यर्थः। पुनः कीदृशे, शैवे शिवाश्रयीभूतस्थाने। पुनः की०, परे श्रेष्ठे। कीदृशः योगीशः गुरुपादपद्मयुगलालम्बी गुरुदेवचरणकमलद्वयावलम्बनशीलः। पुनः की०, समाधौयुतः ध्यानैकलीनः ॥ समाधिनिष्ठो विचक्षणो यतिवरस्तां कुलकुण्डलिनीं जीवेनसार्धं मुक्तिप्रदे परमशिवस्थाने सहस्रारे नीत्वा इष्टफलप्रदां चैतन्यस्वरूपां भगवतीं महाकुण्डलिनीं चिन्तयेदितिभावार्थः (शार्दूल वि० वृ०) ॥३॥

लाक्षेति—ततस्तदनन्तरं सुन्दरी लावण्यमयी कुण्डली कुण्डलिनी पूर्णानन्दमहोदयात् सम्पूर्णानन्दस्य महान् उदयो यस्मात् तादृशात् परशिवात् महेश्वरात् लाक्षाभं रक्तवर्णं परमामृतम् उत्कृष्टसुधां पीत्वा कुलपथात् षट्चक्रान्तर्गतमार्गात् मूले मूलाधारपद्मे विशेत् प्रवेशं कुर्य्यात्। पुनर्मूलाधारपद्ममागच्छतीत्यर्थः। तत् तदनन्तरं योगी योगाभ्यासी पुरुषः स्थिरमति निश्चलबुद्धिः सन् दिव्यामृतधारया उत्कृष्टसुधाप्रवाहेण परशिवात्स्रवद्रसप्रवाहेणेत्यर्थः। ब्रह्माण्ड भाण्डस्थितं संसारभाजनवर्ति दैवतं देवसमूहं सन्तर्पयेत् प्रीणयेत् तृप्तियुक्तं कुर्य्यादित्यर्थः। अमृतधारया कथंभूतया योगपरम्परया विदितया योगश्रेण्या ज्ञातया ॥ परमसुन्दरी कुण्डलिनी देवी सहस्रदलकमलान्तःस्थितात् परमानन्दहेतोः परमशिवात् प्रस्रवन्तींलाक्षावल्लोहितां सुधां पीत्वा षट्चक्रकर्णिकारन्ध्रमार्गेण पुनर्मूलाधारपद्ममागच्छेत् तदा निश्चलबुद्धिः समाधिनिष्ठोजनः योगाभ्यासविदितया तदमृतधारया ब्रह्माण्डस्थितं देवसमूहं संतर्पयेदितिभावार्थः (शार्दूल वि० वृ०) ॥४॥

ज्ञात्वैतदिति—यतमना विषयान्तरनिवृत्तचेता योगी योगाभ्यासी जनः समाधौयुतो ध्यानासक्तः सन् श्रीदीक्षागुर्विति श्रीयुक्तो योदीक्षागुरुः योगक्रियोपदेशकस्तस्य महात्मनोयः पादपद्मयुगलामोदप्रवाहः चरणकमलद्वयनिषेवणजन्यहर्षधारा तस्य उदयात् प्रादुर्भावात् गुरुचरणानुग्रहादितिभावः, एतत् पूर्वोक्तम् उत्तमम् उत्कृष्टम् क्रमं षट्चक्रवेधनविधिं ज्ञात्वा बुध्वा संसारे न जनिष्यते भवसागरे तस्य पुनर्जन्म न भवतीत्यर्थः। कदा कस्मिन्नपि संक्षये प्रलये नहिसंक्षीयते नैवक्षयमेति न नश्यतीत्यर्थः। सजनः पूर्णानन्दपरम्पराप्रमुदितः पूर्णानन्दश्रेण्या हर्षितः। शान्तः। स्थिरमतिः। सतामग्रणीः सतां साधूनामग्रणीरग्रगण्यो भवतीतिशेषः ॥५॥

योऽधीतइति—स्वभावस्थितः शान्तचित्तः श्रीमच्छ्रीगुरु पादपद्मयुगलालम्बी श्रीयुतगुरुदेवपादपद्मद्वयनिविष्टचित्तः। यतान्तर्मनाः यतं विषयान्तरेभ्योनिवृत्त मन्तर्मनोयस्य तादृशः वशीकृतचित्त इत्यर्थः। योगी योगाभ्यासी योजनो निशि रात्रौ सन्ध्ययो रहोरात्रसन्धियुग्मवेलायाम् अथदिवादिने च अमलं स्वच्छं शुद्धं संस्कृतं सुशुद्धं सर्वशास्त्रसम्मतम्। मोक्षज्ञाननिदानं तत्त्वज्ञानस्यादिकारणम् एतत्क्रमं कुण्डल्युत्थापनरीतिं योऽधीते पठति, तस्य जनस्य चेतश्चित्तं कर्तृ अभिष्टदैवतपदे इष्टदेवचरणारविन्दे अवश्यं नरीनृत्यते अतिशयेन नृत्यतीतिदिक् ॥६॥

षट्चक्रनिरूपणचित्रस्य भाष्यं समाप्तिमगात्।

॥ भाषाटीका ॥

अब कुलकुण्डलिनी उत्थापन क्रम वर्णन करतेहैं। जो योगाभ्यासी सुधील शुद्धज्ञानस्वरूप यम नियमादि अष्टाङ्गयोगके साधनमें तत्पर है वह श्रीगुरुमहाराजके श्रीमुखद्वारा महामोक्षका मार्ग जो कुण्डलिनी जगानेकी रीति औ ऊपर कथन कियेहुए षट्चक्रोंके वेधनेकी रीति जानकर उक्त स्वयम्भूलिङ्गके ऊपर निवास करनेवाली कुलकुण्डलिनी देवी को वायु औ अग्निसे तपायमान * करतेहुए अर्थात् सोईहुई कुण्डलिनीको जगाकर उसके साढ़ेतीन आवेष्टनोंको सीधाकरतेहुए औ उक्त स्वयम्भूलिङ्गको वेधतेहुए अंकुशबीज जो (हूँ) शब्द उसके बार २ उच्चारण द्वारा उक्त कुण्डलिनीको ब्रह्मनाड़ी होकर मूलाधारपद्मके मध्य ब्रह्मद्वारके मुखमें लेजाताहै ॥१॥

फिर यह कुण्डलिनी शुद्धसत्तास्वरूप अविनाशनी दामिनीके दमकते हुए सूत्र समान अत्यन्त सूक्ष्मा औ चमकीली लिङ्गत्रय अर्थात् मूलाधारपद्म स्थित **स्वयम्भूलिङ्ग**, हृदयपद्मस्थित **वाणाख्यलिङ्ग** औ आज्ञाख्यचक्र स्थित **इतराख्यलिङ्ग** तीनों लिङ्गोंको वेधतीहुई औ षट्पद्म होतीहुई अर्थात्

* वायु औ अग्निसे तपायमान करना गुरुद्वारा जानना।

ब्रह्मनाड़ीद्वारा अति सूक्ष्मरूपसे षट्चक्रोंको वेधतीहुई और बिजुली समान क्षणमात्र उनपद्मों पर अवस्थानि करतीहुई ब्रह्मरन्ध्रमें प्राप्त हो विलास विशिष्ट अर्थात् शिवशक्ति संभोगरससयुक्त सूक्ष्म नाम शिवके सङ्ग शोभायमान होतीहै, अर्थात् अत्यन्त सूक्ष्मरूप परमशिवके संगमसे यह भी परमसूक्ष्मताको प्राप्त होतीहुई मोक्षमार्ग को जनातीहै ॥ २ ॥

सुधी अर्थात् ज्ञानवान योगी जन श्रीगुरुपादपद्मावलम्बी अर्थात् श्रीगुरुके चरणारविन्दके सेवनेवाले समाधि क्रियाके यत्नमें तत्पर नवशृङ्गारयुक्त अथवा नवों रसोंको प्रगट करनेवाली कुण्डलिनीको जीवात्मा के साथलेकर मोक्ष देनेवाले निर्म्मल श्रेष्ठ सहस्रदलकमलमें परमशिवके समीप पहुंचा सबको इष्टफलकी देनेवाली चैतन्यरूपा अतिश्रेष्ठा सहस्रदलपद्माधिष्ठात्री श्रीपरमेश्वरी महाकुण्डलिनी देवीको ध्यानकरतेहैं ॥३॥

फिर यह कुण्डलिनी उक्तप्रकार ब्रह्मरन्ध्रमें पहुंच परमानन्द स्वरूप परमशिवसे रक्तवर्ण अमृतको पानकर फिर उक्त षट्चक्र मार्गद्वारा मूलाधारमें लौटकर सुस्थिर अर्थात् गुप्तरूप होजातीहै, मानो शयन करजातीहै। तत्पश्चात् स्थिरमति योगीजन परमशिवसे टपकतेहुए दिव्य ब्रह्माण्डस्थित देवसमूहको इसी अमृतधारासे तृप्तकरतेहैं औ सब देवोंको तृप्तकर आप भी तृप्त होतेहैं, यह अमृतधारा केवल योगी जनोंको योगाभ्यासद्वारा जानने योग्यहै क्योंकि योगही क्रियाद्वारा इस अमृतको पानकर तृप्तहो कालको जय करतेहैं ॥ ४ ॥

श्रीदीक्षागुरुके चरणकमलके प्रतापसे उत्तम इन्द्रियजित, समाधि विषय अभिलषित योगी जन इस उत्तम क्रमको अर्थात् कुण्डलिनी उत्थापन द्वारा षट्चक्रवेधविधिको जानकर अति आनन्दके साथ इस संसारके जन्म मरणसे छूटकर परब्रह्ममें प्रवेशकर अचलपदको प्राप्त होजातेहैं और उनका नाश किसी भी प्रलयकालमें नहीं होता औ ऐसे प्राणी परमानन्द स्वरूप साधकजनोंमें अग्रणी अर्थात् श्रेष्ठ औ शान्तियुक्त होजातेहैं ॥५॥

वशीकृतचित्त अर्थात् जो वश करलियाहै अपना मन औ स्वभावस्थित अर्थात् दिव्य भावविशिष्ट अपने आपमें स्थित योगी जन श्रीगुरुके युगल चरणकमलकी सेवामें रहनेवाले उत्तम मुक्तिदायक ज्ञानका आदिकारण शास्त्रोंके मतसे शुद्ध, फिर शोभनशील शोभायमान सर्ववादिसम्मत सर्व विद्वानोंके मतका एक सम्मत (सोसयाने एकमत) जो उक्त उत्तम क्रम उसे दिनरात प्रातः सन्ध्या, औ पक्षान्तर पाठकरेंगे उनका चित्त अपने इष्टदेवता विषय अवश्यही नित्य नृत्य करतारहेगा अर्थात् अभ्यास करते करते स्वयं इष्टदेवरूप होजावेंगे ॥ ६ ॥ इति ॥

इति षट्चक्रनिरूपणचित्रं समाप्तम् ।

॥ शुद्धाशुद्धपत्रम् ॥

पृष्ठ	भाग	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१	२	स्वामी	स्वामि
२	२	२	सुपुम्न	सुपुम्णे
२	२	३	पिंगला	पिङ्गला
२	२	३	गांधारी	गान्धारी
२	२	३	शंखिनी	शङ्खिनी
२	२	५	पिंगले	पिङ्गले
२	२	५	सु॒ म्णै	सुपुम्णै
२	२	२४	पट्दल	षड्दल *
२	२	४२	स्वामी	स्वामि
८	१	२५	च्छिरस्था	च्छिरस्स्था
९	१	७	गणिपूरक	मणिपूरक
९	१	१२	गर्कटक	मर्कटक
९	१	२०	तद्वन्भ्रगताया	तद्वन्भ्रगतायाः
९	१	२९	विद्युतत्समूह	विद्युत्समूह
९	१	३९	ग्रन्थिस्तानम्	ग्रन्थिस्थानम्
१०	१	२९	लांगं	लाङ्गं
"	१	२९	तदंके	तदङ्के
"	१	३०	स्तदंके	स्तदङ्के
"	२	२९	लिंग	लिङ्ग
११	१	२	शंखा	शङ्खा
"	१	१६	प्रबंधैः	प्रबन्धैः
"	१	३४	तदंके	तदङ्के
"	२	३	"	"
"	२	११	खंडो	खण्डो
"	१	२६	कांचन	काञ्चन
"	२	११	सम्पति	सम्पत्ति
"	२	३६	बांधूली	बान्धूली
१२	१	१५	लिंग	लिङ्ग
"	१	२२	शंखा	शङ्खा
"	१	२२	शंखस्य	शङ्खस्य
"	१	२३	शखा	शङ्खा
"	१	३०	मंजुल	मञ्जुल
"	१	३१	बंध	बन्ध
"	१	३४	कांक्षायाम्	काङ्क्षायाम्
"	१	३९	लिंगो	लिङ्गो
"	१	३९	विद्युत्‌विलास	विद्युद्विलास
"	२	२	अत्यन्तल्पाकारा	अत्यन्ताल्पाकारा
"	२	२	नित्त्या	नित्या
"	२	१९	झटाति	झटिति
"	२	२९	ऊर्द्ध	ऊर्द्ध
१४	१	४	सिंदूर	सिन्दूर
"	१	८	परिवृत्तम्	परिवृतम्
"	१	२२	लसितै	लसितम्
"	१	३३	पीतवर्णं	पीतवर्णम्
१४	२	१४	अहांकार	अहंकार
१४	२	३५	स्याम	श्याम
"	२	४०	स्यामा	श्यामा
१५	१	६	वाहुज्ज्वालाङ्गम्	वाहूज्ज्वलाङ्गम्
"	१	१०	सिंदूर	सिन्दूर
"	१	२०	टूंडी	टूण्डी
"	२	१४	सिंदूर	सिन्दूर
"	२	२३	सिंदूर	सिन्दूर
"	२	२४	त्रयम्बक	त्र्यम्बक
"	२	२७	मंगल	मङ्गल
"	२	२८	वेदवाहु	वेदवाहू
"	२	३३	कांचन	काञ्चन
१६	१	१५	लिंग	लिङ्ग
"	१	२७	कनकाकारांग	कनकाकाराङ्ग
"	१	२९	पंकजं	पङ्कजं
"	२	२२	बंधूक	बन्धूक
"	२	२१	"	"
"	२	३५	सिंदूर	सिन्दूर
१७	१	१०	इशा	ईशा
"	१	११	अनाहत्	अनाहत
"	२	४	पंङ्कजम्	पङ्कजम्
"	२	९	संपादकत्त्वा	संपादकत्वा
"	२	२२	रंजन	रञ्जन
१८	१	२३	पंचास्यो	पञ्चास्यो
"	२	२९	अंके	अङ्के
"	२	३५	शोभितांगस्य	शोभिताङ्गस्य
"	१	८	प्रसिधा	प्रसिद्धा
१९	१	१	त्यंकुश	त्यङ्कुश
"	१	२	अंकुश	अङ्कुश
"	१	६	पंचास्य	पञ्चास्य
"	१	१६	"	"
"	१	२९	मास्तेति	मास्तइति
"	१	३३	क्रूद्ध	क्रुद्धः
२०	१	२०	सुहदां	सुहृदां
"	२	१	भ्रूवो	भ्रुवो
"	२	१२	ठमरुं	डमरुं
"	२	२८	हाकिनी शक्ति	हाकिनीं शक्तिं
"	२	३३	झटाति	झटिति
"	२	३३	मुनिन्द्रो	मुनीन्द्रो
"	२	३६	अद्वेता	अद्वैता
"	२	३७	सिद्धिप्रसिद्धः	सिद्धिप्रसिद्धिः
२१	१	२२	अस्योपरि	अस्या उपरि
२१	१	३१	दर्सनान्तरं	दर्सनानन्तरं
२२	२	१४	साक्षीभूत	साक्षिभूत
२३	२	३	तत्व	तत्त्व
२४	२	२५	भंगुरवती	भङ्गुरवती

* इस पदमें जहां २ (ट) होगया है सर्वत्र (ड) जानना ।

भारतत्रिकुटीमहल प्रधानसभा

चन्दवारा मुज़फ्फ़रपुर (बिहार)

आयुष्पर्य्यन्त मेम्बरों (Life members)

के लिये जितनी पुस्तकें अबतक तयार होकर छपगई हैं।

	नाम पुस्तक।	मूल्य डाकव्ययसहित।
१.	**बृहत्सन्ध्याविधि—** सर्व प्रकारके वेद और शाखावालोंकी सन्ध्या, प्राणायामकी पूर्ण रीति सहित।	१ रु०
२.	**मन्त्रप्रभाकर—** इसमें सर्व प्रकारकी सन्ध्यायोंके मन्त्रोंकी भाषा टीका दीहुई है।	यन्त्रालय (छापेखाने) में है
३.	**षट्चक्रनिरूपणचित्र—** इसमें प्राणायाम सिद्ध होनेकी सुलभ रीति, ध्यान निमित्त पद्मोंका चित्र, कुण्डली जगानेकी विधि वर्णित है। मूल भाष्य औ भाषाटीका सहित।	२॥।०
४.	**षट्चक्रनिरूपणमूर्ति—** यह सम्पूर्ण शरीरका एकही चित्रहै जिसमें प्राणायाम साधन निमित्त सातों चक्रों औ नाड़ियोंकी मूर्ति दीहुई है।	॥०
५.	**प्राणायामविधि—** इसमें यम नियम, षट्कर्म, प्राणायाम, नादश्रवण इत्यादि हठयोग औ राजयोगके अंग दियेहुए हैं।	।=)
६.	**बृहत्स्नानविधि—** विधिपूर्वक वैदिक स्नानकी रीति दीहुई है।	=)
७.	**प्रातःस्मरण—** इसमें प्रातःकाल स्मरण करनेके निमित्त, वेदोंके मन्त्र औ श्लोकों औ भाषा कवितोंके साथ अपने २ इष्टदेवका ध्यान दियाहुआहै।	-)
८.	**प्राणायाममञ्जरी—** प्रथम कर्णिका। प्राणायाम साधनवालोंको किन २ बातोंपर ध्यान रखना चाहिये विस्तार पूर्वक वर्णन है। इसकी १०१ कर्णिकायें हैं जिसमें प्रथम कर्णिका छपकरतयार है। प्रति कर्णिका मूल्य।	-)
९.	**अनाहतयन्त्र—** यह पूर्वके योगियोंका निकालाहुआ एक यन्त्र है जो कई बूटियों औ मसालोंके मेलसे बना है। इसको दोनों कानोंमें लगानेसे अनाहतध्वनि श्रवणकरनेमें आती है औ दशों प्रकारके शब्द सुनते २ अन्तमें ॐकार प्रणव आपसे आप सुनाजाता है जिसको सुनते २ साधक समाधिस्थ होजाता है औ परमानन्द लाभकरता है।	३।-)

बाबूलाल शर्म्मा

पुस्तकाध्यक्ष

त्रिकुटीमहल सभा चन्दवारा

मुज़फ्फ़रपुर (बिहार)

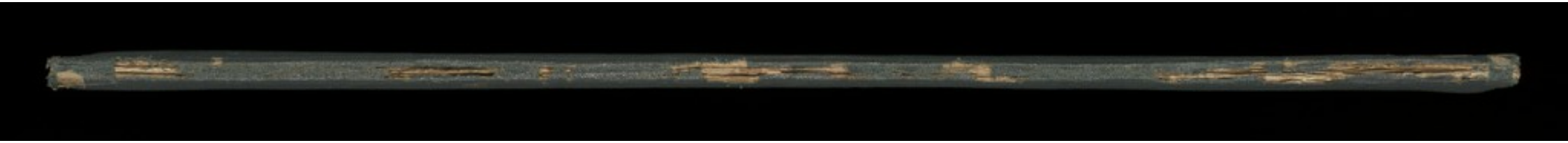

P.P.
SANSK.
391

xrite
colorchecker CLASSIC

0 Cm 1 2 3 4 5 6 7 8 9 10 11 12 13 14 15 16 17 18 19 20 21 22 23 24 25
0 Inch 1 2 3 4 5 6 7 8 9 10
Wellcome Collection

x-rite
colorchecker CLASSIC

0 Cm 1 2 3 4 5 6 7 8 9 10 11 12 13 14 15 16 17 18 19 20 21 22 23 24 25
0 Inch 1 2 3 4 5 6 7 8 9 10
Wellcome Collection